समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार का मासिक

उत्तर प्रदेश

जून, 2026, वर्ष 50

वंदना पवार

₹ 15/-

स्त्रियों की भूख

–पारुल बंसल

इस धरती पर शायद स्त्रियां ही
सबसे अधिक खाती और पीती हैं
अब चाहे वह कैसी भी मार हो
या कितनी ही विकट परिस्थितियों का गरल हो
इन्हें अपने भीतर समोने की अद्भुत कला
को सही दिशा देने के लिए निर्मित है
अनगिनत बावड़ियां
जो इनकी देह में ईश्वर ने रोप रखी हैं
शायद यह स्त्रैण गुणों में
अव्वल नंबर पर ही रहा होगा...
इतना सब खाने–पीने के बाद भी
क्यों इनका पेट नहीं भरता
बंधी रहती हैं उसी खूंटे से
न जाने किस आस में
जब रखती हैं व्रत और उपवास
बस उसी दिन
नहीं खाती और पीतीं कुछ
सब बचा हुआ घूमता है घर में इधर से उधर
क्या हर आखिरी बची हुई वस्तु उन्हीं के लिए बनी है?
क्या वही निपुण है हर उपेक्षा को सहने के लिए...?
क्या उनकी अस्थि मांस मज्जा अभ्यस्त है
निकृष्ट वस्तुओं के ग्रहण के लिए....?
क्या वह अभ्यस्त हैं कसमें खाकर स्वयं को हर बार सिद्ध करने के लिए...?
क्या परोपकार का इंजेक्शन
सिर्फ उनकी ही नसों में लगाया गया है..?
क्या उनकी मनोदशा हमेशा तत्पर है
हर आवेग को समेटने के लिए...?
यदि हां...
तो वह भी रत्नगर्भा से कम नहीं...
जो अनुकूल वातावरण और
उचित खाद पानी न मिल पाने के
बाद भी,
तलछट को हटाकर
सींचती है
देश के भविष्य को .....

◆

मो. : 8273588382

अनुक्रम

आलेख

- प्रकृति के सुकुमार कवि–सुमित्रानंदन पंत ❑ विजयशंकर पाण्डेय / 3

विशेष लेख

- गागर में सागर भरती आकाशवाणी ❑ संगीता ''विमल'' / 5

कहानियाँ

- गुलमोहर ❑ डॉ. कविता विकास / 7
- टाइम बैंक ❑ पूनम मनु / 10
- पटाक्षेप ❑ डॉ. प्रीति कबीर / 15
- कदमों के निशान ❑ कुसुम अग्रवाल / 19
- अदृश्य दरवाजा ❑ अर्चना राजपूत / 23

लघुकथा

- दिल का सुराख ❑ बंशीलाल परमार (आशुतोष) / 18
- खुशियों के गुलाब ❑ रेणु गुप्ता / 25

कविताएँ

- स्त्रियों की भूख ❑ पारुल हर्ष बंसल / आवरण–2
- चलो प्यार से रहा जाए ❑ रतन श्रीवास्तव / आवरण–3
- करुणा व्यापार नहीं करती ❑ सुमन यादव / 26
- पास हमारे बैठो ❑ रमेशचंद्र पंत / 27
- खुशी की चाहत ❑ नरेन्द्र सिंह 'नीहार' / 28
- सेवा मुक्ति ❑ नील मणि / 29
- मन सर ❑ श्याम नारायण सिंह 'अघोर' / 30

गतिविधि

- गंभीर स्त्री विमर्श का दस्तावेज सरोज कुमारी की पुस्तक ❑ उमंग वाहाल / 31

उत्तर प्रदेश

❑ वर्ष–50 ❑ अंक–88
❑ जून, 2026

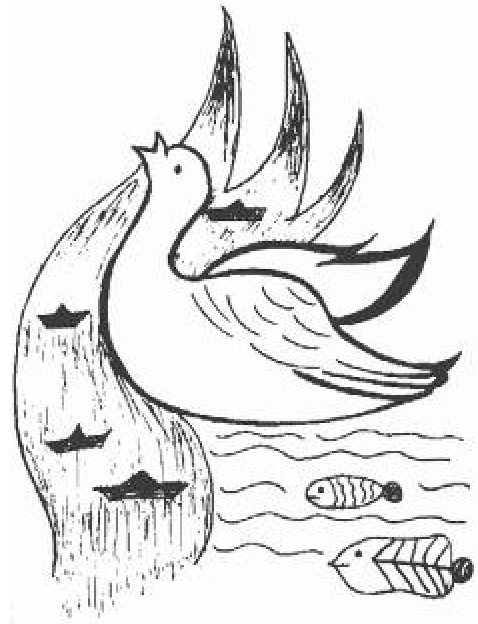

संरक्षक एवं मार्गदर्शक : ❑ **संजय प्रसाद**
अपर मुख्य सचिव, सूचना

प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी : ❑ **विशाल सिंह**
सूचना निदेशक, उत्तर प्रदेश

❑ **अरविन्द कुमार मिश्र**
अपर निदेशक, सूचना

❑ **चन्द्र विजय वर्मा**
सहा. निदेशक (प्रकाशन)

प्रभारी सम्पादक सूचना : ❑ **दिनेश कुमार गुप्ता**

सहयोग : ❑ **अजय कुमार द्विवेदी**
सहयुक्त सम्पादक

आवरण : वंदना पवार

भीतरी रेखांकन : अवधेश मिश्रा / स्वाति वरनवाल

सम्पादकीय संपर्क : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
ईमेल : **upmasik@gmail.com**

दूरभाष : कार्यालय : ई.पी.ए.बी.एक्स 0522–2239132–33, 2236198, 2239011

पत्रिका information.up.nic.in वेबसाइट पर उपलब्ध है।

❑ एक प्रति का मूल्य : पंद्रह रुपये
❑ वार्षिक सदस्यता : एक सौ अस्सी रुपये
❑ द्विवार्षिक सदस्यता : तीन सौ साठ रुपये
❑ त्रैवार्षिक सदस्यता : पांच सौ चालीस रुपये

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे मासिक पत्रिका 'उत्तर प्रदेश' और सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।
–सम्पादक

आवर्तन

साहित्य योग है विचारों का, भावनाओं का, व्यक्ति की सोच और समझ का। आचरण और व्यवहार का। गीता में तीन योगों की विशेष रूप से चर्चा की गई है। ये योग हैं ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्म योग। साहित्य में ये तीनों ही योग समाहित हैं। जो योग की इस त्रिवेणी में स्नान कर लेता है, उसके लिए भाव गंगा के रहस्यों को समझना आसान हो जाता है। साहित्य अध्ययन, मनन और निदिध्यासन का विषय है। इसके बिना बात बनती नजर नहीं आती। प्रकृति में जिस तरह हर क्षण बदलाव होते रहते हैं, वैसा ही कुछ जीवन के भी साथ है। यहां कुछ भी स्थिर नहीं रहता। धर्मग्रंथों में भी चलते रहने की बात कही गई है। चलायमान जल ही स्वच्छ और स्वास्थ्यकर होता है। ठहरा हुआ पानी सड़ने लगता है, दूषित होने लगता है। वायु के साथ भी कमोवेश यही बात है। ठहरी हुई हवा घुटन पैदा करती है, इसलिए ही तो साहित्य में नित्य नवाचार की अपेक्षा भारतीय मनीषियों ने की है। साहित्य जीवन में लोकमंगल की जमीन तैयार करता है। साहित्य में हर क्षण कुछ नया हो रहा है। कुछ पुरातन चीजें भी नये स्वरूप में पाठकों के समक्ष प्रकट हो रही हैं लेकिन इन सबके बावजूद सूर, तुलसी और कबीर की तरह के साहित्य नहीं आ पा रहे हैं। मुंशी प्रेमचंद, अमृतलाल नागर, भगवतीचरण वर्मा व फणीश्वरनाथ 'रेणु' की तरह की रचनाधर्मिता कम ही देखने को मिल रही है। लोक की चिंता कम ही देखने को मिल रही है, यह चिंताजनक स्थिति तो है लेकिन साहित्य जगत को बहुत कुछ अच्छा और लीक से हटकर हो रहा है, इस सच को भी नकारा नहीं जा सकता है। साहित्य संस्कृति और शब्द संसद को महनीयता प्रदान करते हैं।

जून माह में बाबा नागार्जुन, विक्रम सेठ, सत्येन्द्र नाथ टैगोर और बालकृष्ण भट्ट आदि साहित्य जगत की स्वनाम धन्य हस्तियों ने जन्म लिया और अपने लेखन से भाव जगत को उच्चता प्रदान की। वहीं कबीरदास, प्रेमचंद महाश्वेता देवी और सुमित्रानंदन पंत ने इसी माह में इस धराधाम से प्रयाण किया था। ऐसी साहित्यिक प्रतिभाओं को विनम्र अभिवादन। इस अंक में संगीता विमल का आलेख गागर में सागर भरती आकाशवाणी, डॉ. कविता विकास की कहानी गुलमोहर, कुसुम अग्रवाल की कहानी कदमों के निशान, पूनम मनु की कहानी टाइम बैंक, डॉ. प्रीति कबीर की कहानी पटाक्षेप एवं वंशीलाल परमार एवं रेणु गुप्ता की लघु कहानियाँ प्रकाशित की जा रही है। उम्मीद है, आप सुधी पाठकों को पसंद आएगी।

इसके अतिरिक्त सुमन यादव, रमेश चन्द्र पंत, नीलमणि, श्याम नारायण सिंह 'अघोर', नरेन्द्र सिंह नीहार, पारूल बंसल, रतन कुमार श्रीवास्तव की कविताओं के साथ ही पत्रिका के नियमित स्तम्भ भी है।

इसी माह की 23 जून को देश की राष्ट्रपति द्रौपदी मूर्म ने राष्ट्रपति भवन में दूसरे नागरिक अलंकरण समारोह में साहित्य कला, खेल चिकित्सा, विज्ञान और समाज सेवा में क्षेत्र में चिरंजीलाल, अनिल रस्तोगी, स्व. रघुपत सिंह और प्रो. मंगला कपूर सहित 65 हस्तियों को पद्म पुरस्कार प्रदान किए।

यह अंक आपको कैसा लगा आपकी प्रतिक्रियाओं और सुझावों को हमें बेसब्री से इंतजार रहेगा, आप सभी सुधी पाठकों के सुझाव पत्रिका को नव संबल प्रदान करेंगे। ऐसा हमारा प्रबल विश्वास है।

● **दिनेश कुमार गुप्ता**

प्रकृति के सुकुमार कवि–सुमित्रानंदन पंत

❑ विजयशंकर पाण्डेय

एक ऐसे समय पर जब पेड़ों की अधाधुंध कटाई चल रही है। पहाड़ काटे जा रहे हैं। जंगल उजाड़े जा रहे हैं, तालाब भाठे जा रहे है, बड़े–बड़े बाँधों में छोटी–छोटी नदियों का विसर्जन किया जा रहा है, तालाब, पोखर, डैम अस्तित्वविहीन किये जा रहे हैं। यानी संपूर्ण प्रकृति पर संकट के बादल मडरा रहे हैं, जब मानव जीवन का अस्तित्व ही दाँव पर लगा हो, तब छायावाद में आधार स्तंभ और प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानंदन पंत की स्मृतियाँ हमारे मानस पटल पर सहज ही जीवन्त हो उठती हैं, जिन्होंने प्रकृति में जीवन देखा। उसमें राग रंग और रस देखा। एक जीवित ऊर्जा देखी। एक लय, एक ताल, एक संगीत, एक राग, एक धड़कन महसूस की। जहाँ वीणा के तार झंकृत होते हैं, रात की नीरवता में। जो हमारी न सिर्फ जीवनदायिनी है, वरन सूक्ष्म रूप में जो हममें समायी हुई है।

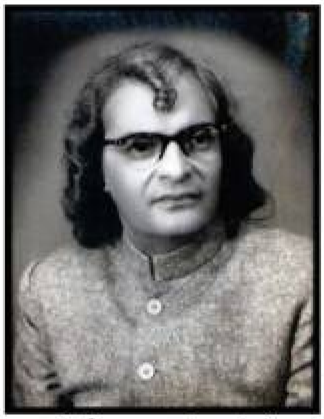

(सुमित्रा नदंन पंत)

प्रकृति के इस सुकुमार कवि का जन्म आज के उत्तराखण्ड प्रदेश के बागेश्वर जिले के कौसानी गाँव में 20 मई सन 1900 ई0 को हुआ था। जन्म के कुछ घंटों बाद ही इनकी माँ का स्वर्गवास हो गया था, जिससे उनका पालन–पोषण उनकी दादी के हाथों हुआ। इनके बचपन का नाम गोसाई दत्त पंत था, जिसे बाद में शिक्षा ग्रहण के दौरान उन्होंने बदलकर सुमित्रानंदन पंत कर लिया। उनकी माँ का नाम–सरस्वती देवी तथा पिता का नाम गंगादत्त पंत था। 1910 में शिक्षा ग्रहण करने गवर्नमेंट हाई स्कूल, अलमोड़ा गये और वहीं उनके बचपन का नाम बदला गया। पहाड़ों की गोद में उनका बचपन बीता, इसीलिए उनकी रचनाओं में जबर्दस्त प्रकृति प्रेम उभरकर सामने आया।

उनकी प्रकृति प्रेम की दृष्टि केवल स्थूल प्रकृति–जैसे जंगल, पहाड़ झरने, वृक्ष या प्रपातों तक सीमित नहीं थी वरन समय के अंतराल में सूक्ष्म से सूक्ष्मतम होती गयी, रहस्यवादी होती गयी और चेतना की उस ऊँचाई तक पहुँच गयी, जहाँ परम चेतना अपना नर्तन करती है। पूरी प्रकृति में उन्होंने एक पूरा जीवन देखा। चेतना के स्तर पर पत्थर, पेड़ पशु, मानव सब एक थे। सबमें एक अविरल ऊर्जा समायी हुई है। उसके रूप अलग–अलग दिखते हैं। यहाँ वह प्रख्यात क्रांतिकारी व आध्यात्मिक व्यक्तित्व के स्वामी अरविन्दों से प्रभावित जान पड़ते हैं, जिन्होंने 'अतिमानस की चेतना' का सिद्धांत अध्यात्म जगत को दिया। उन्होंने भी 'ऊर्जा के एकत्व' की बात की और कहा कि पत्थरों में भी चेतना है, तभी वह बढ़ते–घटते हैं। यह जरूर है कि उनकी चेतना सोयी हुई है। पेड़ों पौधों, जन्तुओं, जानवरों और मानवों सब में एक ही चेतना समायी हुई है, जो विभिन्न आकृतियों में सोयी–जागी है।

उच्च शिक्षा ग्रहण करने वह प्रयागराज आये। तब पूर्व का आक्सफोर्ड कहे जाने वाले

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन का व्यापक असर पड़ा। इस प्रभाव से उन्होंने पढ़ाई छोड़ दी और गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े। यद्यपि घर पर उन्होंने स्वाध्याय जारी रखा और हिंदी, संस्कृत, बांग्ला और अंग्रेजी भाषा का गहन अध्ययन किया। इन भाषाओं में उन्होंने दक्षता व विशिष्टता भी प्राप्त की।

उनकी काव्य चेतना का विकास प्रयागराज में हुआ। वह किशोरवय में ही कविता लिखने लगे थे। उनका रचनाकर्म 1916 से 1977 ई. तक लगभग 60 वर्ष तक रहा। उनकी काव्य यात्रा तीन चरणों से होकर गुजरी। पहली 1916 से 1935 ई. तक छायावाद की रही। इस काल की उनकी रचनाएँ हैं– वीणा, ग्रन्थि, पल्लव, गुंजन, ज्योत्सना आदि। उनकी रचना पल्लव में छायावादी युग की सभी प्रवृत्तियाँ हैं। यहाँ छायावाद का उत्कर्ष है। इसमें उनकी प्रतिमा का सर्वश्रेष्ठ प्रस्फुटन हुआ है।

दूसरा चरणः– प्रगतिवादी काव्य का है। उनकी रचनाओं पर कार्ल मार्क्स और फ्रायड का व्यापक असर देखा जा सकता है। इन कृतियों में उन्होंने सौन्दर्य चेतना से बाहर निकलकर एक आम आदमी की पहचान करने का स्तुत्य प्रयास किया। इस कालखण्ड की उनकी रचनाएँ हैं– युगांत, युगवाणी, और ग्राम्या।

तीसरा चरणः– अध्यात्मवाद का है। उनकी रचनाओं पर महर्षि अरविन्दों के विचारों का व्यापक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है जिसमें चेतना से परम चेतना तक का यात्रा वृत्तांत है। स्वर्णधूलि, अंतिमा, रजत शिखर, लोकायतन इसी चरण की रचनाएँ हैं।

युगांतर, स्वर्णकिरन, कला और बूढ़ा चाँद, सत्यकाम, मुक्ति यज्ञ, तारापथ, मानसी, उत्तरा, रजतशिखर, शिल्पी, सौवर्ण, पतझड़, मेघनाद, अवगुंठित आदि अन्य रचनाएँ हैं। चिदम्बरा काव्य संग्रह का प्रकाशन 1958 में हुआ। 1937 से लेकर 1957 तक की रचनाओं का इसी में संग्रह है।

कविता के अलावा, नाटक, उपन्यास, निबन्ध और अनुवाद के क्षेत्र में भी उनका योगदान अविस्मरणीय है। उनके काव्य का उपादान है– झरना, बर्फ, पुष्प, लता, भ्रमर गुंजन, उषाकिरण, शीतल पवन, तारों की चुनरी ओढ़े गगन से उभरती संध्या, वह मानवतावादी और सौन्दर्य बोध के कवि हैं। आध्यात्मिक रचनाओं में रहस्यवादी प्रवृत्तियाँ देखी जा सकती हैं। वह खुद भी गौरवर्ण, सुंदर, सौम्य मुखाकृति, लंबे घुंघराले बालों वाले थे।

साहित्यिक अवदान के प्राप्त सम्मानः–

ज्ञानपीठ पुरुस्कारः– उनकी कालजयी रचना चिदंबरा का 1958 में प्रकाशन हुआ था। इसमें उनकी 1937 से 57 तक की कविताओं का संग्रह है। इसी में उनकी अन्य रचनाएं भी संग्रथित हैं– युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्णकिरण, स्वर्णधूलि और उत्तरा की चुनी हुई कविताएं इसमें शामिल हैं। इस ऐतिहासिक कृति के लिए उन्हें वर्ष 1968 में भारत के सर्वोच्च साहित्यिक सम्मान 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया गया था। यह सम्मान पाने वाले वह हिन्दी के पहले साहित्यकार है। इस रचना में उनका आध्यात्मिक, मानसिक और भौतिक चिन्तन उभरकर सामने आ गया है। एक नये मानव की परिकल्पना, जो चेतना के उच्चतम शिखर पर चढ़कर गुलामी के बंधनों से मुक्त हो जाता है।

साहित्य अकादमी पुरस्कारः– 1960 में उन्हें 'कला और बूढ़ा चाँद' रचना के लिए प्रतिष्ठत 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया था। 1961 में उन्हें भारत सरकार द्वारा उनके साहित्यिक योगदान के लिए 'पद्म भूषण पुरुस्कार' से सम्मानित किया गया।

सोवियत लैण्ड नेहरू पुरस्कारः– उनकी प्रसिद्ध रचना 'लोकायतन महाकाव्य' के लिए 1965 में उन्हें इस सम्मान से सम्मानित किया गया। 1977 में उनकी 77 वर्ष की उम्र में मृत्यु हो गयी थी।

संदेशः– सुमित्रानंदन पंत का साहित्य प्रकृति प्रेम से शुरू होकर चेतना के अभ्युत्थान पर खत्म हो जाता है। वह प्रकृति में जीवन देखते थे। उसमें एक अक्षय ऊर्जा देखते थे, जो मानव चेतना से संपृक्त हो जाती है। इसलिए मानव चेतना के उत्कर्ष के लिए प्रकृति का संरक्षण और उसका संवर्धन उनकी रचना का अमर संदेश है। पर्यावरण प्रदूषण, जलवायु में बदलाव, धरती की बढ़ती गर्मी से मानव अस्तित्व संकटग्रस्त हो गया है। जी. 20 के सभी देशों ने इस पर चिंता जाहिर की है। जंगल, पहाड़, नदियाँ, पेड़, वृक्ष सुरक्षित रहें, तो उनके साहित्य की अर्थवत्ता होगी। बड़े–बड़े एक्सप्रेसवे, बड़ी–बड़ी परियोजनाओं, बड़े औद्योगिक संस्थानों के लिए जंगल उजाड़े जा रहे हैं, जिससे पर्यावरण प्रदुषित हो रहा है और धरती गरम हो रही हैं। इसलिए छोटे–छोटे उद्यमों की स्थापना, छोटे–छोटे बाँधों की स्थापना, नदियों–तालाबों का संरक्षण, गाँव की सड़कों का विकास सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए।

(लेखक 'उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान' द्वारा अपनी रचना 'श्रद्धांजलि' के लिए 'धर्मवीर भारती सृजन सम्मान' से सम्मानित हैं।) ◆

पता : ग्राम–चपरो, पोस्ट–कोरॉव (प्रयागराज)
मो. : 9450433117

गागर में सागर भरती आकाशवाणी

❑ संगीता "विमल"

ऑल इंडिया रेडियो यानी आकाशवाणी 8 जून, 2026 को 90 वर्ष पूरे कर लेगा। वर्ष 1936 में इसकी स्थापना हुई थी। तब से यह निरंतर आगे बढ़ता ही गया, यह लोगों को मनोरंजन के साथ–साथ बहुत महत्वपूर्ण जानकारियां और देश–दुनिया में क्या कुछ घटित हो रहा है, उसे समाचार के रूप में हमें सुनाता है, इसके लिए एक कहावत सिद्ध होती है और वह है गागर में सागर। अब तो इसकी एक ऐप से हम देश के हरेक राज्य के रेडियो प्रोग्राम्स को देश और दुनिया के किसी भी कोने में सुन सकते हैं, वो भी बिना किसी रुकावट के। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के कार्यक्रम 'मन की बात' ने रेडियो को एक नई पहचान दी है। आज हमने तकनीक में बहुत तरक्की कर ली है, लेकिन कुछ ऐसी चीजें हैं, जिन्हें हम कभी नहीं भूल सकते, इनमें से ही एक है रेडियो। जब लोगों के पास न तो टेलीविजन था और न ही मोबाइल, तब मनोरंजन का एकमात्र साधन होता था रेडियो। आकाशवाणी से विद्यार्थियों के लिए विशेष कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। शास्त्रीय संगीत हो, भक्ति–भजन हो, खेती–बाड़ी की जानकारी हो, युवाओं के कॅरिअर की बात हो या महिलाओं और बच्चों के लिए कोई जानकारी, आकाशवाणी पर सब कुछ मिलता है। यह देश की संस्कृति और विरासत से परिचय करवाता है।

आकाशवाणी के इतिहास में जून की दो तारीखों का विशेष महत्त्व है। तीन जून के दिन आकाशवाणी के जरिये देश के इतिहास ने करवट ली थी, जबकि दिल्ली के अलीपुर इलाके के अस्थायी दफ्तर में आठ जून, 1936 को आकाशवाणी की शुरुआत 'ऑल इंडिया रेडियो' के रूप में हुई थी।

भारतीय प्रसारण की ठोस बुनियाद रखने का श्रेय बीबीसी के पूर्व अधिकारी लायनेल फील्डन को जाता है, जिन्हें इंडियन स्टेट ब्रॉडकास्टिंग कंपनी ने भारत बुलाकर एक जनवरी, 1936 को प्रसारण नियंत्रक के पद पर तैनात किया। उनकी ही अगुआई में दिल्ली के अलीपुर के पांच कमरों के एक अस्थायी दफ्तर से आठ जून, 1936 को आकाशवाणी का प्रसारण शुरू हुआ। तब से लेकर तीन मई, 2023 तक ऑल इंडिया रेडियो के नाम से जाना जाता रहा। फिर आधिकारिक रूप से इसका नाम केवल आकाशवाणी कर दिया गया। इसके नाम के बारे में लायनेल फील्डन ने अपनी पुस्तक नेचुरल बेंट में लिखा है कि उन्हें इंडियन स्टेट ब्रॉडकास्टिंग सर्विस नाम नहीं जम रहा था। एक समारोह में लायनेल ने इस नाम को लेकर उनसे चर्चा की। तब तक देश में 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट' आ चुका था। लायनेल की राय थी कि इंडियन स्टेट ब्रॉडकास्टिंग नाम इस अधिनियम के अनुरूप नहीं है, लिहाजा चर्चा के बाद नया नाम दिया गया, ऑल इंडिया रेडियो। इसी ऑल इंडिया रेडियो को आकाशवाणी के नाम से भी जाना जाता है। यह नाम महान गीतकार पं. नरेंद्र शर्मा ने 1956 में दिया था। रेडियो के लिए आकाशवाणी शब्द का प्रयोग 1939 में रवींद्रनाथ टैगोर ने भी किया था। पहले आकाशवाणी पर शुरू में गीत–संगीत के लिए शास्त्रीय कलाकार नहीं आते थे, तवायफें और उनके संगीतकार ही आते थे। रेडियो पर हारमोनियम पर प्रतिबंध था, जिसे 1970 में हटाया गया। आकाशवाणी को क्लासिकल बनाने में सूचना और प्रसारण मंत्री बी.बी. केसकर और आकाशवाणी के तत्कालीन महानिदेशक, प्रसिद्ध लेखक एवं आईसीएस अधिकारी जगदीश चंद्र माथुर की जोड़ी का बड़ा योगदान रहा। केसकर ने आकाशवाणी पर स्तरीय शास्त्रीय संगीत को बढ़ावा देने के प्रयास किए। तब रेडियो से हर भाषा के लेखकों को जोड़ा गया, जिससे रेडियो की भाषा को स्तरीय बनाने की कोशिशें हुईं।

तीन जून, 1947 की सांझ आकाशवाणी के जरिये ही दुनिया को देश के बंटवारे का संदेश दिया गया था। स्वाधीनता के समय नौ रेडियो केंद्र थे। बंटवारे के बाद तीन पाकिस्तान को मिले, जबकि छह भारत के पास रह गए। देश के पहले सूचना और प्रसारण मंत्री सरदार पटेल ने रेडियो का महत्व समझते हुए उसके तेज विकास की नींव रखी। भारत में रेडियो पर पहली न्यूज बुलेटिन 19 जनवरी, 1936 को प्रसारित हुई। सवाल है कि जब ऑल इंडिया रेडियो की स्थापना ही आठ जून, 1936 को हुई, तो उसके छह महीने पहले न्यूज बुलेटिन की शुरुआत कैसे हुई। दरअसल, इंडियन स्टेट ब्रॉडकास्टिंग कंपनी प्रायोगिक तौर पर प्रसारण जारी रखे हुए थी। आज आकाशवाणी का समाचार सेवा प्रभाग 82 भाषाओं और बोलियों में रोजाना लगभग 510 से ज्यादा बुलेटिन प्रसारित करता है।

आकाशवाणी ने खेती–किसानी को सहयोग देने के लिए 1965 में अलग से फार्म एंड होम यूनिट शुरू की, जिसके जरिये खेती की जानकारी के साथ ही लोकगीत आदि प्रसारित होने लगे। 1962 के युद्ध के वक्त जवानों में जोश भरने के लिए शुरू जयमाला कार्यक्रम की पहली प्रस्तोता नरगिस दत्त रहीं। बाद में लता, आशा और मुकेश जैसी हस्तियों ने भी इसे प्रस्तुत किया।

रेडियो की कुछ आवाजों का जिक्र न हो तो कहानी पूरी नहीं हो सकती। मेल्विल डी. मेलो की बुलंद आवाज ने 1948 में महात्मा गांधी की अंतिम यात्रा का लगातार सात घंटे तक कमेंट्री करके इतिहास रचा था। देवकी नंदन पांडे और रामानुज प्रसाद सिंह की गंभीर व सधी हुई आवाजें समाचारों की विश्वसनीयता का पर्याय बनीं। महिला समाचार वाचकों में विनोद कश्यप को 'बुलंद आवाज' और बेबाकी के लिए जाना जाता है। जसदेव सिंह, विजय डेनियल्स और सुशील झवेरी जैसे दिग्गजों की आवाज भी आकाशवाणी की पहचान रही। जम्मू–कश्मीर पर कबायली हमलों के बाद आकाशवाणी के जरिये ही पंडित नेहरू ने संयुक्त राष्ट्र से अपील की थी। गांधीजी सिर्फ एक ही बार, 12 नवंबर, 1947 को आकाशवाणी आए और यहां से उन्होंने कुरुक्षेत्र आदि में स्थित पाकिस्तानी शरणार्थियों को संबोधित किया, जिसका सकारात्मक असर पड़ा था। फिर गांधी जी भी रेडियो के मुरीद हो गए थे। ◆

पता : नटराजपुरम, कमला नगर, आगरा
मो. : 9119083302

गुलमोहर

❑ डॉ. कविता विकास

मिट्टी का रिश्ता सभी रिश्तों में सबसे गहरा होता है। चार दशक पहले छोड़े इस कस्बे में सब कुछ बदल गया था, फिर भी मुझे अपनी गली, अपना घर, विद्यालय और खेल के मैदान सब यूँ याद आ रहे थे मानो कल की बात हो।

गुलमोहर की छतनार शाखों की काली परछाई में खड़े–खड़े लगा कि कुछ तो है जो यह पेड़ मुझे खींच रहा है। जब भी आगे बढ़ती हूँ, लगता है थोड़ी देर और ठहर जाऊँ। आखिरकार उसके नीचे बने चबूतरे में बैठते ही हरी–हरी पत्तियों में छुपा टूटा–सा एक हरा बोर्ड दिख गया, "वृक्षारोपण–श्री मानवेंद्र शुक्ला"। पुरानी स्मृतियों की धुँधली तस्वीर दिखने लगी, मेरे जन्म पर पिताजी ने यह पौधा लगाया था। शाम की ललछइयों का कालिमा में तब्दील हो जाना मुझे अच्छा लग रहा था मानो कोई पहचान न ले। लेकिन कोई पहचानेगा भी कैसे, पैंतीस साल पहले वाले लोग अब यहाँ बचे ही नहीं थे।

रेलवे में कार्यरत पिता जी की मैं तीसरी बेटी थी। बेटे की चाह में पहली बेटी से तीसरी तक में केवल रुदन–क्रंदन ही लोग सुनते रहे थे। पिता जी ने तो बिस्तर पकड़ लिया था। जैसे–जैसे मैं बड़ी होती गयी, शारीरिक विकलांगता भी दिखने लगी। मेरा दायाँ अंग बाएँ से पतला था। एक तरह से पोलियो–ग्रस्त। साथ ही, दाहिने हाथ की अंगुलियाँ भी टेढ़ी–मेढ़ी। बाकी दोनों बहनों का गोरा रंग और पढ़ाई में अव्वल होना उनके बेटी होने पर भी एक राहत थी, लेकिन मुझसे तो पिताजी कभी खुश नहीं रहे। माँ समझाती भी थीं कि वह भी जिगर का टुकड़ा है, भेदभाव नहीं होनी चाहिए, पर माँ की हैसियत भी क्या थी! जिस माँ को देहरी से बाँध कर केवल पति की जरूरतों को पूरा करना जिंदगी की सीख बना दी गयी हो, उसके लिए सुझाव देना आकाश से तारे तोड़ने के समान था। फिर भी वह माँ के जिगर का टुकड़ा थी। बहनों का दाखिला निजी स्कूल में करवाया गया था और उसका सरकारी में। पाँचवीं कक्षा में पिताजी को राजकीय आवासीय बालिका विद्यालय का पता चला, जहाँ सरकारी

दर पर करीब–करीब निःशुल्क शिक्षा ही थी। भावीनगर छात्रावास उसे छोड़ने माँ भी गयीं। बिछोह का दुःख क्या होता है, तब समझ में आया था। उससे बड़ी असुरक्षा की भावना ने माँ–बेटी को ऐसा जकड़ा कि घंटों दोनों गले मिल कर रोती रहीं पर पिता जी का दिल नहीं पसीजा। दस साल की कच्ची उम्र में मुझे छात्रावास छोड़ना एक तरह से मेरी जिम्मेदारियों से मुक्त होना ही था। अपने बचपन को मैं आज भी नहीं भुला पायी थी, जाने कब आँखें बरस पड़ीं! माँ ने सीने से सटा कर बुदबुदा कर कहा था, ''जा बेटा, अपने को इतना मजबूत कर ले कि किसी के सहारे की आवश्यकता न पड़े। अपनी माँ को निर्मम न समझना। समय के साथ सब समझ जाएगी तू।'' तब से आज तक समय की हर चोट के निशान मेरे दिलो दिमाग पर अंकित हैं। भारी कदमों से मैंने गेस्ट हाउस का रुख किया। मनोहरपुर बहुत बदल गया था, फॉरेस्ट विभाग का गेस्ट हाउस उसी मैदान में बना था जहाँ शाम को बच्चे खेला करते थे। लेकिन हम थे जो अपनी मनमर्जी किए जा रहे थे। गेस्ट हाउस न जाकर मैं पिछवाड़े के उस विशाल चट्टान तक आ गयी जहाँ अक्सर अपनी सहेलियों के साथ लुका–छिपी खेला करती थी। बरसात में छप–छप करते इसी चट्टान पर सब दोस्त मिलकर खेलते, 'घोघो रानी, कितना पानी' या फिर 'तोहर पनिया में छुपक–छैयाँ।' याद करते–करते ही मैं ठहठहा कर हँस पड़ी। याद करने को तो बहुत कुछ था लेकिन जिन्हें भूलने में मैंने उम्र गुजार दी, उनका विस्मृत होना ही ठीक था।

विद्यालय की प्राचार्या कमला रानी ने पहले दिन ही समझ लिया था कि यह लड़की अपने लड़की होने का दंश भोग रही है। उसे उस पर बहुत प्यार आ रहा था। उसने उसी दिन से उसे अपनी बेटी बना लिया। कुछ महीने उसके माँ–बाप छात्रावास उससे मिलने लगातार आते, बहनें भी आती लेकिन एक दिन माँ ने कह दिया, ''मन बड़ा भारी हो जाता है, कोमल से अलग होते समय। अब मैं नहीं आऊँगी।'' पिता जी को तो जैसे मुँह–माँगा इनाम मिल गया। छुट्टियों में छात्रावास खाली कराया जाता तो मुझमें घर जाने का उत्साह भर जाता लेकिन दो–तीन बार घर जाकर देखा कि मेरे आने से पापा को कोई खुशी नहीं होती बल्कि मेरे वापस जाने के दिन गिनते रहते। जब यह बात कमला दी को पता चली तो उन्होंने प्यार की झप्पी लगाते हुए मुझे आदेश दे दिया, ''अब तुम मेरे साथ ही अपनी छुट्टियाँ बिताओगी। जहाँ तुम्हारी पूछ नहीं होती, वहाँ मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगी। जब तुम्हारा मन करे अपने घर जाने का, कहना, मैं भेज दूँगी।''

कमला रानी का बचपन भी ऐसा ही था। हालात की नजदीकियों ने उन्हें एक–दूसरे के करीब ला दिया। कमला दी मेरे बिना खाना नहीं खातीं थीं। उन्हें शाम के समय हॉकी के मैदान में मुझमें एक विशेष प्रतिभा का पता चला, मैं पक्षियों की बोली निकाल लेती थी और इशारे से उन्हें अपने पास बुला लेती। और तो और, गीली मिट्टी से छोटी–छोटी मूर्तियों का निर्माण बड़ी आसानी से कर लेती। कदाचित मेरी टेढ़ी–मेढ़ी अंगुलियाँ इस कार्य के लिए एक वरदान थीं। कमला दी को मेरे जीवन का उद्देश्य मिल गया था। पढ़ाई में औसत होते हुए भी कला के क्षेत्र में स्कूल का नाम खूब रोशन किया। जब कमला दी का तबादला बिलासपुर हुआ तो मैं भी उनके साथ वहाँ आ गयी। विद्यालय परिसर में एक पंछी बाड़े का निर्माण कराने के लिए मैंने बहुत मेहनत की। जब किसी घायल पंछी की मरहम–पट्टी करती और पक्षी को नवजीवन मिलता, तो लगता मानो अपने ही जख्मों पर मरहम–पट्टी कर ली हो।

धीरे–धीरे मेरी बनाई मूर्तियों की मांग होने लगी। विद्यालय के अंदर–बाहर मुख्य स्थानों पर मेरी बनाई कई मूर्तियाँ सजी हुई थीं। निरीक्षक साहब जब भी आते, इन मूर्तियों की भूरि–भूरि प्रशंसा करते। मुझे इसके लिए अवॉर्ड भी मिला। मैंने फाइन ऑर्ट्स में ही खुद को आगे बढ़ाया और बाद में फाइन आर्ट कॉलेज सुल्तानपुर की प्राचार्या बनी। इस बीच कमला दी की तबीयत खराब रहने लगी थी। उन्होंने रिटायरमेंट के पहले ही नौकरी छोड़ने का मन बना लिया, तो फिर मैंने उन्हें अपने पास सुल्तानपुर बुला लिया। लेकिन वह ज्यादा दिन जीवित नहीं रहीं। दीदी की सेवा–सुश्रुषा से मुक्त होने के बाद मूर्ति कला का प्रशिक्षण देने मैं दूर–दूर जाती। इस व्यस्तता में मुझे अपने अतीत पर आँसू बहाने का भी वक़्त नहीं मिला। एक दिन अचानक एक चिट्ठी मिली, सो यहां मनोहरपुर आना पड़ा। चिट्ठी राजेश की थी।

''प्रिय दीदी, तुम्हें पता नहीं होगा, तुम्हारे हॉस्टल जाने के तीन साल बाद मेरा जन्म हुआ। रंग–रूप बिलकुल तुम–सा। जब मुहल्ले वाले कहते कि मैं तो कोमल की जेरोक्स कापी हूँ तब तुम्हारे बारे में माँ ने बताया। अगर मैं कहूँ कि तुम्हें याद करके माँ–पापा बहुत उदास हो जाते थे,

तो शायद तुम्हें यकीं नहीं होगा। लेकिन यह सच है। पापा तो तुम्हें त्यागने के अपराध बोझ को झेल नहीं पाए और तनाव में रहते–रहते स्वर्ग–सिधार गए। माँ ग्लानि से भरी हुई थीं। कमला दी के तबादले के बाद यह पता चला कि तुम भी बिलासपुर चली गयी हो। लेकिन उसके बाद कहाँ हो, यह नहीं पता चला। बीमारी की अवस्था में तुमसे मिलने की अंतिम इच्छा लिए माँ भी चल बसीं। पिता जी ने तुम्हारे नाम कुछ फिक्स्ड डिपॉजिट किए थे जो मेरे पास हैं। कुछ महीने पहले अखबार में तुम्हें राष्ट्रपति अवार्ड मिलने की सूचना पढ़ी। साथ में तुम्हारे जीवन से जुड़ी वह सभी बातें, जिसे मां–पिताजी कभी–कभी बताया करते थे। तुम्हारी पथ–प्रदर्शक में कमला दी का नाम देख कर यह जानकारी पुख्ता हो गई कि तुम ही मेरी दीदी हो। तुम्हारी तस्वीर देखकर मेरी पत्नी ने कहा, "इनका चेहरा आपसे मिलता है।" अब शक की कोई गुंजाइश ही नहीं थी। तुम मनोहरपुर आने की सूचना दो, मैं भी वहीं आता हूं।

तुम्हारा भाई

राजेश

पापाजी ने जीते जी अगर थोड़ा भी इस प्रेम को दिखाया होता तो शायद सारी उपेक्षा मैं भूल जाती और छुट्टियों में भी घर जाने की ललक बनी रहती। लेकिन ऐसा नहीं हुआ और सम्भवतः मेरी लम्बी अनुपस्थितियों ने उन्हें विचलित कर दिया। गेस्ट हाउस के कमरे में चाय पीते–पीते पुनः मुझे अपने उस परिवार की याद आ गयी। तभी सेवक ने खबर की कि कोई मुझसे मिलने आया है। बैठक में देखा, मेरा भाई राजेश दोनों बाहें फैलाए मेरी ओर आ रहा था। खून के रिश्ते की गरमाहट क्या होती है, आज महसूस किया। राजेश ने बहुत देर तक सबके बारे में बताया, बहनों की शादी–ब्याह, उनका पता आदि। पापा द्वारा मेरे लिए रखे फिक्स्ड डिपॉजिट का चेक मुझे सौंपते हुए राजेश ने कहा, ''दीदी, माँ की बहुत इच्छा थी कि तुम घर वापस आ जाती। अब चलो, मेरे बच्चे भी तुम्हारा साथ चाहते हैं।'' मैंने उसके आँसू पोंछते हुए कहा, मेरा परिवार बहुत बृहद है, भाई। हजारों विद्यार्थी हैं, अनेक पशु–पक्षी। स्वावलम्बन की राह पर चलने वाले अनेक उपेक्षित बहनों की मैं आशा हूँ। मेरे आशियाने का नाम भी गुलमोहर है, जिसकी छाया में हर थका–मांदा प्राणी आराम पाता है। तुम जाओ और अपना खयाल रखना। हाँ, तुम्हें कभी किसी चीज की जरूरत हो तो बेहिचक मेरे पास आ जाना।''

धीरे–धीरे मेरी बनाई मूर्तियों की मांग होने लगी। विद्यालय के अंदर–बाहर मुख्य स्थानों पर मेरी बनाई कई मूर्तियाँ सजी हुई थीं। निरीक्षक साहब जब भी आते इन मूर्तियों की भूरि–भूरि प्रशंसा करते। मुझे इसके लिए अवॉर्ड भी मिला। मैंने फाइन ऑर्ट्स में ही खुद को आगे बढ़ाया और बाद में फाइन आर्ट कॉलेज सुल्तानपुर की प्राचार्या बनी। इस बीच कमला दी की तबीयत खराब रहने लगी थी। उन्होंने रिटायरमेंट के पहले ही नौकरी छोड़ने का मन बना लिया, तो फिर मैंने उन्हें अपने पास सुल्तानपुर बुला लिया। लेकिन वह ज्यादा दिन जीवित नहीं रहीं। दीदी की सेवा–सुश्रुषा से मुक्त होने के बाद मूर्ति कला का प्रशिक्षण देने मैं दूर–दूर जाती। इस व्यस्तता में मुझे अपने अतीत पर आँसू बहाने का भी वक्त नहीं मिला। एक दिन अचानक एक चिट्ठी मिली, सो यहां मनोहरपुर आना पड़ा। चिट्ठी राजेश की थी।

राजेश के जाने के बाद मैंने आईने के सामने खुद को देखा। धूसर रंग, बालों की चाँदी, आँखों के नीचे की कालिमा। बहुत कुछ बदल गया था। जो नहीं बदला था वह मेरा पोलियो ग्रस्त हाथ और टेढ़ी अंगुलियाँ। मेरी कमजोरी ही मेरी ताकत बन गयीं थीं। उसके एवज में मिला देशवासियों का प्यार ही मेरी कमाई थी। जीवन की आपाधापी में यादें विस्मृत होती गयीं लेकिन माँ का वह अमर वाक्य अब भी जहन में था, ''जा बेटा, अपने को इतना मजबूत कर ले कि किसी के सहारे की आवश्यकता न पड़े।'' पापा के चेक को दूसरे दिन ही भुनाने के लिए बैंक भेज दिया। मेरे नाम के वो सारे रुपये कालेज की दान–पेटी में डालते हुए उन्हें कृतज्ञतापूर्ण प्रणाम किया। माँ–पिताजी की आत्मा को आज शांति मिल गयी होगी। ◆

पता : फ्लैट नम्बर–टी/1801,
सेक्टर–121, होम्स–121, नॉएडा, पिन–201301, उत्तर प्रदेश
मो. : 9431320288

टाइम बैंक

❑ पूनम मनु

'ईशू ऊ ऊ ईशू ऊ ' पुकारते टीना का गला बैठा जाता था। उसने घर का कोना–कोना छान मारा। ईशान था कि मिल नहीं रहा था। वह पगलाई–सी हाँफती इधर–उधर दौड़ रही थी। उसका दिल बहुत जोरों से धड़क रहा था। उसका स्वयं पर कोई वश नहीं था वह जोर–जोर से रोने लगी– ईशू ऊ ऊ...।

"मो अ म, मोम मैं ई हा ईहा" नौ वर्षीय ईशान अपनी माँ टीना को कातर स्वर में पुकारता, शिवम और काव्या को इस आस से देख रहा था कि वे कुछ करेंगे। किन्तु वे दोनों उससे अधिक सहमे हुए थे। किसी अनहोनी की आशंका से घिरे, उनकी आंखो में भय और आँसू गड्डमड्ड थे। टीना के मानसिक झंझावातों से आवाज टकराई तो उसने अपनी पलकें धीमे से खोलीं, झपकाई और ज्यों ही उसे वस्तुस्थिति का भान हुआ, वह झटके से उठ बैठी, ईशान को अपनी ओर खींचकर, अपनी छाती से चिपटा लिया, और रोने लगी।

घर में अचानक शोर सुनकर, सुकेश घबराए हुए अपने कमरे से दौड़े आए– "क्या हुआ?"

"क कुछ नहीं, बुरा सपना देखा..." टीना ने अपने सीने से चिपकाए ईशान को धीरे से अलग कर, आंसुओं से तर अपने चेहरे को पोंछते हुए कहा।

"ओफ! तुम्हारे ये डरावने सपने। कितनी बार समझाया है, ज्यादा मत सोचा करो। मैंने कहा ना कि मैं इसकी राह सरल बनाकर जाऊँगा, ऐसे ही भटकने नहीं दूंगा इसे। व्यर्थ के विचार मन में मत लाया करो। पर तुम समझो तब न!" ईशान से

जुड़ी उसकी हर चिंता, हर सुझाव से सहमत होते हुए भी उनको लगता था– वह ईशान को लेकर 'ओवर प्रोटेक्टिव' है।

ऐसा ही सोचना शिवम और काव्या का भी है। माँ को सकुशल देखकर उन दोनों ने चैन की लंबी श्वास तो भरी थी। मगर सपने की बात सुनकर उनके चेहरों पर भी खिन्नता और अप्रीति के भाव स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। वह उनके मन को भली प्रकार समझती है। उनके हिस्से की निकटता और समय वह ईशान को देती है, वह मानती है। मगर प्यार कम नहीं करती। उसकी ममता अपने तीनों बच्चों के लिए समान तड़पती है। पर ईशान को लेकर उसका डर क्या है, कैसे बताए उन्हें? एक डर उसका चैन लिए हुए है, दूसरा तो प्राणघातक है, ओफ.।

सुबह भारी प्रतीत हुई उसे। उसका मन किसी काम में नहीं था। सिर दर्द से फटा जा रहा था। सुबह का नाश्ता उसने जैसे–तैसे बनाया।

सुकेश नहा धोकर, नाश्ता करके निकल गए। उनकी आज किसी पुराने दोस्त के साथ मीटिंग थी। उसने राहत की साँस ली। सुकेश होते तो दोपहर का पूरा भोजन तैयार करना होता। अपने चारों के लिए तो वह केवल वेज बिरयानी से काम चला लेगी। मगर काव्या और शिवम् को आज छोले भटूरे खाने की सूझी थी। मन नहीं था। न तन ही साथ दे रहा था। ऊपर से ईशान के ढेर सारे काम। पूरी ऊर्जा इकट्ठी करके, ईशान के कई आवश्यक दैनिक कार्य उसने निबटा दिए थे। मगर छोले भटूरे...

उसने बड़े प्यार से कहा– "बेटे, आज छोले भटूरे ऑनलाइन मंगा लो, अगले संडे पक्का मैं घर पर ही बनाकर खिलाऊंगी। आज मटर पुलाव बना देती हूँ या वेज बिरयानी।"

मगर नहीं, दोनों अपनी जिद पर अड़े रहे।

चाहती तो दो थप्पड़ उनको जड़कर खिचड़ी बनाकर खिला सकती थी। मगर मन मारकर छोले भटूरे की सामग्री तैयार करने लगी थी। ये अपराधबोध न इंसान में बहुत बुरा है। विशेषकर स्त्रियों में।

एक बच्चे की देखभाल में कितना खटती है, नहीं सोचती। दूसरे बच्चे को उतनी देखभाल और समय नहीं दे पा रही तो उसका अपराधबोध अपने सिर पर रख लिया है उसने। उसकी कोख से एक ऐसे बच्चे ने जन्म लिया जो मानसिक, शारीरिक रूप से अक्षम है तो इसमें क्या उसका दोष है? फिर भी वह इसमें भी अपना ही दोष ढूंढती है, वाह रे माँ!

जब मन न हो तो हर काम उल्टा–पुल्टा होता है। भटूरे बनाते समय उसका हाथ गर्म तेल को छू गया। उसकी चीख निकल गई। शिवम् और काव्या दौड़ते हुए आए।

माँ का जला हाथ और उसकी आँखों में आंसू देखकर दोनों ही जड़ हो गए– "सॉरी मॉम!" उसका हाथ बर्फ के पानी में भिगोते काव्या बोली।

"हमें, हमें आपको फोर्स नहीं करना चाहिए था।" शिवम् झेंपता हुआ बोला।

वे दोनों देखो कैसे भले बने हैं, जो उसको बहुधा तानों–उलाहनों की सूली पर चढ़ाए रखते हैं, उससे अप्रसन्न रहते हैं– 'आपको तो ईशू के अलावा कुछ सूझता ही नहीं, ईशू, ईशू और बस ईशू। हम तो आपके बच्चे हैं ही नहीं।'

आज भी तो उन्होंने वही किया था।

वह सोफे पर बैठकर रोने लगी। सुबक–सुबक। हिचकियाँ ले लेकर। कोई उसका दुःख समझता नहीं। काव्या और शिवम उसको चुप कराने लगे तो उनको झिड़कते हुए बोली– "तुमको क्या पता, मुझ पर क्या गुजर रही है। मैं रोज नर्क की आग में जलती हूँ। मेरा डर तुम समझते नहीं। तुमको इतनी भी बुद्धि नहीं, ईशान अपने काम खुद करने में सक्षम नहीं। उसकी स्थिति देखकर भी तुम लोग आँखें मूँदे रखते हो। न तुमको उसका कष्ट दिखता, न

इसका चलन विदेशों में था, पर अकेलेपन की समस्या से भारत भी अब अछूता नहीं रहा है, तो यहां भी टाइम बैंक तेजी से शहरों में स्थान बना रहे हैं। मैंने पापा से बात करके, अपना अप्वॉइंटमेंट फिक्स करा दिया है। अब हम तीनों जितना पॉसिबल उतना अपना समय टाइम बैंक में जमा करेंगे। ताकि ईशू को जब भी जरूरत हो, इसका उपयोग हो सके। आपके साथ आज से ईशू को हम भी संभालेंगे। और हां, आप बस ईशू को संभालिए। बाकी हम संभालेंगे।"

मेरा ही। उसके प्रति तुम्हारा रूखा व्यवहार देखकर डरती हूँ और सोचती हूँ, ईशान अकेले कैसे जीवन काटेगा, जब मैं न रहूँगी... जब मैं न रहूँगी। हिच्च! तुम में से कोई उसको अपने साथ तो लगाएगा नहीं। अभी से दिखता है मुझे, जो अभी उसके लिए मेरी ममता और उसकी देखभाल से चिढ़ते हो, उसको जवानी में या बुढ़ापे में तुम क्या साथ रखोगे। मैं रात–दिन इस चिंता में घुली जाती हूँ, इसकी जिंदगी कैसे कटेगी? मेरा साथ देने की बजाय मुझे ताने मारते हो। ये अकेले मेरा का कर्तव्य तो नहीं, तुमको भी तो ईश्वर ने ये दायित्व सौंपा है। तुम्हारा अपना सगा भाई है, नहीं तो उसको तुम्हारे जीवन में क्यों भेजते वे? क्यों तुमसे उसका कोई रिश्ता बनाते? मुझे दिख रहा है, मुझे भी कुछ ऐसा ही करना पड़ेगा जैसा शीला आंटी ने.... हिच्च!" बिखरे बाल, लाल भभूका मुख। मन से उद्विग्न, वह रोती जा रही थी।

शिवम और काव्या अपनी माँ को रोता देखकर घबरा गए। अपने किए पर उन्हें बहुत पछतावा हो रहा था– "सॉरी मॉम, सॉरी मॉम, हम आज के बाद ऐसा नहीं करेंगे, सॉरी। प्लीज मॉम हमें माफ कर दो! सॉरी।" पहला दिन था जब उन दोनों ने अपनी माँ को इतना थका और दुःखी देखा था।

जी भर रोने के बाद टीना शून्य में ताकने लगी। बहुत दिनों का गुबार मन में भरा था, निकल गया, किन्तु हल्की न हो सकी। काव्या ने पानी पिलाया। शिवम उसके पैर पकड़कर नीचे बैठ गया। उसके दिमाग में एक बात बहुत तेजी से टकराई थी– शीला आंटी

"मो अ म, मोम मैं ई हा ईहा" नौ वर्षीय ईशान अपनी माँ टीना को कातर स्वर में पुकारता, शिवम और काव्या को इस आस से देख रहा था कि वे कुछ करेंगे। किन्तु वे दोनों उससे अधिक सहमे हुए थे। किसी अनहोनी की आशंका से घिरे, उनकी आंखों में भय और आँसू गड्डमड्ड थे। टीना के मानसिक झंझावातों से आवाज टकराई तो उसने अपनी पलकें धीमे से खोलीं, झपकाई और ज्यों ही उसे वस्तुस्थिति का भान हुआ, वह झटके से उठ बैठी, ईशान को अपनी ओर खींचकर, अपनी छाती से चिपटा लिया, और रोने लगी।

वह कुछ शांत–सी दिखी तो शिवम ने पूछा– "मॉम ये शीला आंटी कौन हैं? आपने ऐसा क्यों कहा, आपको भी शीला आंटी के जैसा करना पड़ेगा। क्या किया था शीला आंटी ने?"

इस सवाल पर उसने उसे गहरी दृष्टि से देखा और निरपेक्ष भाव से कहा– "कोई नहीं, तुम जाओ... मुझे अकेला छोड़ दो।"

"बताओ ना मॉम प्लीज, आपने ऐसा क्यों कहा? उनका हमारे ईशान से क्या संबंध है?" काव्या ने अनुरोध किया। अनचाहे भी उसकी आँखों के आगे दीपू तैर गया।

उसने झिड़कते हुए कहा– "रहने दो, तुम्हें किसी की पीड़ा से क्या लेना–देना होगा, जब अपनी ही माँ का दुःख नहीं दिखता तो।"

"प्लीज मॉम बताइये ना!" दोनों हठ करने लगे थे।

बताना तो नहीं चाहती थी, किन्तु उन्हीं स्मृतियों के साए उसे घेरने लगे, जिन स्मृतियों के निकट से भी नहीं गुजरना चाहती थी वह। अतीत की दबी आहट मुखर होने लगी, दीपू, भोला दीपू–

उसने बताना शुरू किया–

'शीला आंटी, विधवा थीं। सौम्य स्वभाव की एक हंसमुख स्त्री, जो अपने पुत्र दीपू के साथ उस कॉलोनी में एक किराएदार के रूप में रहने आई थीं। यूं उनका बड़ा बेटा विदेश में था। पर कभी आता नहीं था। कई वर्ष बीत गए।

उस दिन, हमारी रमा भाभी के घर में कीर्तन था। उन्होंने बच्चों के भोजन के पश्चात कीर्तन में आयीं बुजुर्ग महिलाओं को जीमने का आग्रह किया।

शारीरिक और मानसिक रूप से विकलांग, सत्रह वर्ष का नासमझ दीपू, अक्सर ज्यादा खा लेता था। आंटी इसका ध्यान रखती थीं। उस दिन भी, उसके खाने के बाद, उन्होंने प्यार से उठाकर बच्चों के साथ बाहर खेलने भेज दिया, इस निर्देश के साथ– ''जा खेल ले, टीनू, अपने साथ रखना बेटा।"

माँ का मन अपने बच्चे पर आते संकट को भांप जाता है शायद। दीपू को गए अभी पंद्रह बीस मिनट ही हुए थे कि आंटी को बेचैनी–सी होने लगी।

"दीपू... दीपू को देखूँ कहाँ है ''वे पैर में पड़ी रॉड के कारण लड़खड़ाती हुई उठीं और गिरती पड़ती–सी बाहर

निकल आईं। जीमने को कहती सब महिलाओं को अनसुना करके।

घर से बाहर निकलकर उन्होंने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई किन्तु दीपू उन्हें कहीं दिखाई नहीं दिया। कई बार इधर–उधर देखने पर भी जब दीपू न दिखा तो वह पगला–सी गईं– "दलीपा... दीपू ऊ ऊ...ऐ बेटा हिना... बिट्टू, अरे दीपू कहाँ है?"

"पता नहीं आंटी, वो तो बहोत देर से दिखा नहीं" वहाँ खड़े कई बच्चों ने एक साथ कहा तो उनका कलेजा धम्म से बैठ गया–

"बहोत देर से..."

लाचारी और घबराहट में वह दूनी आवाज में चिल्लाने लगीं– "दीपू ऊ ऊ .. . दीपूऊऊऊ" उनका दम था कि अब निकला कि तब।

किसी बच्चे ने बताया– ''दलीप कुछ देर पहले दो तीन लड़कों के साथ, आवास विकास के फ्लैटों की ओर जा रहा था।''

सुनते ही आंटी बदहवास हो उठीं।

तभी वहां पहुंची टीनू पर गुस्से में चिल्ला पड़ीं, ''तूने उसे अकेला क्यों छोड़ा!''

''वो मैं टॉयलेट...''

''चुप!''

कॉलोनी के दो चार लोग और बच्चे, जो उस समय वहाँ थे, उनके साथ दीपू को ढूंढने, कॉलोनी से थोड़ी दूर, टूटे फूटे सुनसान पड़े फ्लैटों की ओर दौड़ गए। एक एक फ्लैट को झांकते, जब कोने के आखिरी फ्लैट में पहुंचे तो वहाँ का दृश्य देखकर सबके रोंगटे खड़े हो गए।

दीपू की पेंट एक ओर पड़ी हुई थी। दो लड़कों ने उसे पूरी तरह दबोच रखा था। एक ने उसका मुंह भींच रखा था।

उफ!

शीला आंटी को तो चक्कर आ गया था।

''और मॉम, ईशू के लिए मैंने एक स्कूल भी सर्च किया है, जहां सेरेब्रल पाल्सी से पीड़ित बच्चों को शिक्षा, अच्छे बुरे टच और बहुत सी अहम जानकारियां दी जाती हैं। उन्हें इस योग्य बनाने की कोशिश की जाती है कि वे अपने जीवन को बहुत हद तक आसान कर सकें। आप ईशू की जरा भी चिंता नहीं करिए। हम सब मिलकर अपने ईशान को संभाल लेंगे।'' काव्या की बातें सुनकर उसकी आंखों से टप टप आंसू बहने लगे।

भीड़ देखकर वे लड़के खिड़की कूदकर भाग गए। सब भयभीत थे। बड़े लोगों ने सबसे पहले सारे बच्चों को वहां से हटाया। फिर भागकर, दीपू को संभाला।

शुक्र था कि दीपू के साथ ऐसा वैसा कुछ नहीं हो पाया था। फिर भी शीला आंटी का क्रोध सातवें आसमान पर था। घर आकर उन्होंने अपने लाडले, अपने जिगर के टुकड़े को खूब पीटा। बिना सोचे कि वह भोला अभी–अभी कितनी मानसिक, शारीरिक त्रासदी से गुजरा है।

"तुझे कितनी बार समझाया किसी के साथ कहीं नहीं जाएगा, तू फिर क्यों गया, क्यों?"

''ऐं ऐं हें पि...च...र देथ ने... आ आ आ हें हिच्च... पि..चर। दे ए थने...''

उन दिनों वीसीआर पर लोग घरों में फिल्में चलाकर देखा करते थे। और दीपू को पिक्चर देखने का बहुत शौक था।

टीनू इसके लिए स्वयं को दोषी मानती रही।

इस घटना को घटे वर्ष भी नहीं हुआ था कि एक बड़ी मुसीबत शीला आंटी और दीपू पर आ पड़ी थी। पेट के बल गिरने से लगी चोट के कारण आंटी को पैंक्रियाज का कैंसर हो गया था। साल से ऊपर चली दवाइयों के बाद भी परिणाम सकारात्मक नहीं आ रहे थे। दीपू के बड़े भाई न होने के समान थे। ऐसे में दीपू की चिंता में आंटी दिन–रात घुलती रहतीं।

और एक दिन... वो काली सुबह... उस कॉलोनी में गिद्ध उतर आए थे।

जिसने भी सुना स्तब्ध रह गया था। पूरी कॉलोनी, एकसाथ बुरी तरह रो पड़ी थी। कोई आँख ऐसी नहीं थी, जो नम नहीं थी। पूरी कॉलोनी में शायद ही उस दिन किसी घर के चूल्हे पर बर्तन चढ़ा हो।

दीपू को अपने साथ शीला आंटी अनंत यात्रा पर ले गईं थी। उन्होंने नींद की गोलियां खाकर....।''

"ओह!" दोनों ने खेदभरी श्वास भरी। दोनों की आँखें गीली हो गई थीं।

"नियति की इस क्रूरता पर हर मानव विवश है। मुझे यह घटना बहुत कचोटती है। काश, इस समस्या का कोई समाधान होता? शीला आंटी और दीपू का यूँ चले जाना मर्मान्तक और त्रासदीपूर्ण था।

नियति कहें या कुछ और... वही चिंता मेरे जीवन में भर गई है। मेरा ईशान लगता है, दीपू लौट आया है। मैं टीनू, इस बार इसके साथ कुछ गलत नहीं होने देना चाहती। मैं इसको... इसको अपनी नजरों के सामने रखूंगी और, और... जाते समय क्या, क्या करूंगी, वह समझ नहीं आता। वही समझ नहीं आता हिच्च!"

"मॉम!"

टीना हिचकियां लेकर फिर रोने लगी थी। काव्या और शिवम् भी। वे सोच रहे थे कि वे दोनों कितने स्वार्थी थे। एक बार माँ की स्थिति समझने की कोशिश नहीं की।

दो दिन बाद...

शिवम और काव्या लैपटॉप लेकर उसके पास आए और बोले– "मॉम, आपकी समस्या का समाधान हम ढूंढ लाए हैं। टाइम बैंक!

"टाइम बैंक?" टीना के लिए ये बिल्कुल नया शब्द था।

सोलह साल के शिवम् को इंटरनेट पर दुनिया भर की जानकारियां सर्च करना अच्छा लगता था। उसने अपनी माँ की चिंता का समाधान भी यहीं से खोजा। वह अपनी बात सरल शब्दों में समझाने लगा–

"मॉम, आजकल परिवार छोटे होते हैं। फिर उस परिवार के बच्चे जॉब के कारण दूर–दूर अकेले अलग–अलग शहरों/देशों में अपने घर बनाते हैं, अपनी दुनिया बसाते हैं। पर उनके मॉम–डैड अकेले रह जाते हैं। वर्तमान में जितना अकेलापन और 'अकेले रह जाना' दुनिया में पैर पसार रहा है, उसने एक बड़ी समस्या लोगों के सामने रख दी है। बुढ़ापे में देखभाल की या किसी के अकेले रहने पर उसकी बीमारी में उसकी देखभाल की, क्योंकि यह समस्या भविष्य में सबके सामने आने वाली है, इसलिए इस संकट से निबटने के लिए टाइम बैंक बनाए गए हैं। इसमें आप जवानी के दिनों से या जब तक आप काम करने में समर्थ हों, इस बैंक का मेंबर बनकर दिन का एक घंटा, दो घंटे जितना समय देना चाहें, दे सकते हैं। इस बैंक के जरूरतमंद मेंबर की देखभाल करके। इस प्रकार आप जितना अधिक समय आप जमा करेंगे, यानी किसी की सेवा करेंगे, उतना ही समय आपको मिल जाएगा।

इसका चलन विदेशों में था, पर अकेलेपन की समस्या से भारत भी अब अछूता नहीं रहा है, तो यहां भी टाइम बैंक तेजी से शहरों में स्थान बना रहे हैं। मैंने पापा से बात करके, अपना अप्वॉइंटमेंट फिक्स करा दिया है। अब हम तीनों जितना पॉसिबल उतना अपना समय टाइम बैंक में जमा करेंगे। ताकि ईशू को जब भी जरूरत हो, इसका उपयोग हो सके। आपके साथ आज से ईशू को हम भी संभालेंगे। और हां, आप बस ईशू को संभालिए। बाकी हम संभालेंगे।"

"तो, तो क्या बस इतना ही, तुम लोग उसे अपने पास नहीं रखोगे कभी?"

"नहीं मॉम, हम तो उसके साथ सदा ही रहेंगे। पर जरूरत पर कभी कोई न हुआ तो, वह अकेला नहीं होगा। कोई न कोई उसके पास रहेगा। इसलिए हम टाइम बैंक में समय जमा करेंगे।" माँ की चिंता पर शिवम ने आश्वासन दिया।

"और मॉम, ईशू के लिए मैंने एक स्कूल भी सर्च किया है, जहां सेरेब्रल पाल्सी से पीड़ित बच्चों को शिक्षा, अच्छे बुरे टच और बहुत सी अहम जानकारियां दी जाती हैं। उन्हें इस योग्य बनाने की कोशिश की जाती है कि वे अपने जीवन को बहुत हद तक आसान कर सकें। आप ईशू की जरा भी चिंता नहीं करिए। हम सब मिलकर अपने ईशान को संभाल लेंगे।" काव्या की बातें सुनकर उसकी आंखों से टप टप आंसू बहने लगे।

काश! दीपू के समय में भी ऐसा कोई उसका अपना होता या टाइम बैंक ही होता, तो वह उसके लिए भी समय जमा कर लेती। और उसे यूं...

समय का चक्र घूमता रहता है। संयुक्त परिवार से एकल में पहुँचा मनुष्य। एकल से टाइम बैंक तक। आपस की देखरेख से, एक दिन पूरी दुनिया, एक बड़ा संयुक्त परिवार होगी। उसे यकीन हो चला है। तब ईशान और दीपू जैसों की माएँ इतनी चिंताओं से नहीं गुजरेंगी। ◆

पता : बी–285, श्रद्धापुरी फेस–द्वितीय, साराधना रोड,
कनकेर करे, मेरठ कैण्ट–250001

मो. : 9012339148

पटाक्षेप

❑ डॉ. प्रीति कबीर

ऑफिस में नये प्रबन्ध निदेशक के चार्ज लेने के बारे में चर्चाएँ गरम थीं। मि. जोशी ने कहा– ''सुना है, मि. दिवाकर काफी सख्त व्यक्ति हैं। कर्मठ और ईमानदार अफसर हैं।'' सुमेर शुक्ला एकाउन्टेन्ट ने जोड़ा–''शायद अविवाहित भी हैं। काम में आनाकानी करने वालों को वो नहीं बख्शते।''

रीमा रोजाना की इस टिप्पणी से ऊब गई थी।

''आप लोग अभी तक मि. दिवाकर से मिले नहीं, और तरह–तरह की अटकलें लगाने लगे।''

रीमा इस कार्यालय में पी.आर.ओ. है। आखिर वो दिन आ ही गया, जब दिवाकर ने अपना कार्यभार सँभाल लिया। रीमा को बहुत गुस्सा आ रहा था। रोज तो वह कितनी पंक्चुअल रहती है। मगर आज ट्रैफिक जाम के कारण उसे देर हो गई। वह कार्यालय के गेट से भीतर घुसी। अभी बैग टेबल पर रखा ही था कि राम सिंह ने आकर बताया– ''रीमा मैडम, आपको साहब बुला रहे हैं। सुबह से कई बार आपको बुलवा चुके हैं, मगर आप सीट पर नहीं थीं।''

रीमा कुछ सहमी। अगर कहीं कुछ अपमानजनक कह दिया दिवाकर ने तो मैं सह नहीं पाऊँगी। यह जॉब ही छोड़ दूँगी। कितनी बार रवि ने कहा है।

''रीमा तुम क्यों नौकरी करना चाहती हो। अभी मैं इस काबिल हूँ कि तुम्हें सुख–साधन मुहैया करवा सकूँ।''

''नहीं रवि ! मुझे कोई अभाव नहीं है। मगर इतने वर्षों की नौकरी है, छोड़ना जरा मुश्किल हो रहा है। मेरे प्रमोशन्स नजदीक आ गये हैं। अब तो हमारी बेटी रिया भी बड़ी हो गई है।''

रीमा ने पर्स से रूमाल निकालकर माथा पोंछा और मि. दिवाकर के केबिन की तरफ मुड़ गई। दरवाजा खोल कर कदम अन्दर रखा। मगर उनकी पीठ सामने दिखी। रीमा ने कहा– ''गुड मार्निंग सर।''

''नो दिस इज गुड डे नाऊ।'' फिर अचानक कुर्सी की व्हील घूम गई। मि. दिवाकर को देखकर वह ठगी रह गई। ''दिवाकर देव आप यहाँ ?''

''हाँ मैं ही हूँ दिवाकर देव। आश्चर्य हुआ न मगर तुम्हें यहाँ देखकर मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। मुझे पता चला कि तुम आजकल यहाँ हो। खुशहाल हो। तुम्हारे पति और बेटी का छोटा–सा सुखद संसार है।''

रीमा इतना कुछ सुनने को तैयार नहीं थी। वह आश्चर्य और व्याकुलता के झीने आवरण में बँधने लगी। उसने धीरे से कहा– ''कैसे हैं आप ?''

''अच्छा हूँ फर्स्ट क्लास ! हाँ, अभी तक कुँआरा भी हूँ। किसी को मन में इस तरह बसाया कि आजतक निकाल नहीं सका। इसी कारण किसी दूसरे को बसा भी नहीं सका।''

रीमा नत दृष्टि किए सुनती रही।

''अब मैं जाऊँ सर ?''

''यह सर–सर क्या है रीमा। तुम मुझे दिवाकर कह सकती हो।'' उसके भीतर एक चक्रवात डोलता रहा।

आज घर वापस आने पर रीमा को एक खालीपन का एहसास होने लगा। उसे बार–बार दिवाकर का ध्यान आता। अभी तक नहीं बदला, वही अंदाज, वही तेवर वही स्लेटी आँखों में लहराता एक गहरा समुन्दर। उसका मन कुछ अस्त–व्यस्त था, बार–बार ध्यान हटाती मगर फिर वहीं जाकर टिक जाता दिवाकर की फेनिल हँसी के साथ आह्लाद् के क्षण ढूँढने लगता।

तो क्या वह अभी तक दिवाकर को मन के किसी कोने में छुपाए हुए है।

दिवाकर देव उससे दो क्लास सीनियर था। उससे रीमा की पहचान नृतिका के घर हुई थी। दिवाकर उसका सगा भाई था। इस पहचान के बाद दिवाकर ने रीमा से दोस्ती की पहल की थी। धीरे–धीरे प्रेम में प्रगाढता आने लगी। दिवाकर उस समय एम.बी.ए. कर रहा था। पापा ने साफ कहा था– ''रीमा अभी वह नौकरी नहीं करता। मैं समझता हूँ, तुम्हें अपने फैसले पर गंभीरता से विचार करना चाहिए।''

रीमा ने दिवाकर के साथ कहीं दूरदराज़ के शहर में चले जाने की इच्छा व्यक्त की थी, मगर दिवाकर ने कहा था–

''ये बातें हमारे घर के लिए अपमानजनक होंगी। हम अभी प्रतीक्षा कर सकते हैं रीमा ।''

रीमा का विवाह रवि से हो गया। वह प्रसन्न थी। रवि के प्रेम, और अपनत्व में वह सब कुछ भूल गई। दूसरे वर्ष ही रीमा ने रिया को जन्म दिया। रीमा मातृत्व के सुख में सराबोर हो उठी। उसके परिवार की बगिया में सुरभि की सुगन्ध थी।

रवि के अक्सर दौरे उसे परेशान करते मगर उसका सारा क्रोध कपूर–सा उड़ जाता, जब रवि उसे अपनी बाँहों में भर कर कहता– ''यह सब कुछ तुम्हारे और रिया के लिए ही तो है रीमा !''

''हालाँकि हमारे तबादले राजनीतिक दबाव में होते हैं, मगर अपनी कर्तव्यनिष्ठा के कारण ही पिछले पाँच वर्षो से मैं यहीं हूँ, आसपास के शहरों में मेरे तबादले हुए हैं।'' एकी और कह प्रगरि।

बस इन्हीं कारणों से रीमा ने इस कम्पनी में एप्लाई किया, और उसका सेलेक्शन पी.आर.ओ. के पद पर हो गया। उसे अच्छी तरह याद है, इस इन्टरव्यू के लिए रवि ने ही उसे प्रोत्साहित किया था। इसी तरह दिन पखेरू से उड़ चले। रिया स्कूल जाने लगी। वह मेधावी छात्रा थी। धीरे–धीरे वह अब बी.ए. में पहुँच गई। उसका आकर्षक एवं लुभावना व्यक्तित्व सभी को प्रभावित किए बिना नहीं रहता। कई लोग उसके ऊँचे कद, सुडौल तन, बड़ी, लम्बी भूरी आँखों के आकर्षण की प्रशंसा करते नहीं थकते।

''रिया तुम्हें तो मॉडलिंग करनी चाहिए।'' पापा ने भी और रीमा ने भी स्वीकृति दे दी।

कुछ ही समय में रिया नम्बर वन मॉडल बन गई। जिस कमोडिटी की वह मॉडलिंग करती, उसका मारकेट हो जाता ।

रीमा जितना दिवाकर देव से दूर जाना चाहती। वह उतना ही उसके नजदीक आना चाहता।

''तुमने मुझे कभी अपन घर नहीं बुलाया रीमा। कभी अपने पति से, बेटी से मुझे भी मिलवाओ।''

कुछ झिझकते हुए रीमा ने हामी भर दी।

''तो कब ?''

''एनी डे यू लाइक।''

''कल का डिनर तुम लोगों के साथ। कोई आपत्ति तो नहीं रीमा ?''

रीमा ने धीरे से कहा– ''बिल्कुल नहीं।''

दिवाकर समय से पहले ही रीमा के घर पहुँच गया।

रवि ने सहर्ष उसका स्वागत किया। वह दिवाकर के हँसमुख व्यक्तित्व और अनौपचारिकता से बिना प्रभावित हुए नहीं रह सका।

दिवाकर ने रवि से मुस्कुराते हुए कहा– ''भई रवि, आई एम रियली एनवी आफ यू''

''वो क्यों ?''

''क्योंकि तुम एक खूबसूरत और अच्छी बीवी के पति हो, और एक प्यारी बेबी गर्ल के पिता भी।''

रिया ने कुछ रूठते हुए कहा– ''अंकल क्या मैं आपको बेबी नजर आती हूँ ?''

दिवाकर ने आगे बढ़ कर रिया के कपोलों पर एक चुम्बन अंकित करते हुए कहा– ''रियली आई एम सॉरी रिया, यू आर ए प्रेटी यंग गर्ल, नाट बेबी।''

दिवाकर की इस बात से रीमा खुश नहीं हुई। मगर रिया के तन–मन में दिवाकर का स्पर्श सुखद तरगें प्रवाहित कर गया।

खाने की मेज पर वो सभी चीजें थीं जो खासतौर से दिवाकर को पसन्द थीं। उसने कनखियों से रीमा को देखा, शायद वह यह कहना चाह रहा था– ''तुम्हारे मन में अभी तक कहीं मैं छुपा बैठा हूँ रीमा।''

रिया ने कई बार कहा– ''अंकल आप कुछ लीजिए न!''

दिवाकर ने बीच में ही रिया को टोका– ''यू में काल मी देव रिया। अब मैं इतना भी बूढ़ा नहीं हो गया हूँ।'' इस वाक्य के बाद उसने रीमा की ओर एक गहरी दृष्टि डाली।

दिवाकर अब अक्सर ही रीमा के घर आने लगा। कभी रवि होता कभी नहीं। कभी सिर्फ रिया होती। रिया अक्सर ही दिवाकर से फोन पर लम्बी बातें करती। रीमा को यह सब कुछ बेचैन करता। किसी आशंका से वह भयभीत रहती।

एक दिन उसने दिवाकर को समझाया– ''तुम मेरी और रवि की अनुपस्थिति में घर मत आया करो।''

''क्यों ? क्या मैं तुमसे कुछ छीन रहा हूँ ? रिया मेरी दोस्त है। हम दोनों एक–दूसरे के साथ कुछ प्रसन्नता के क्षण पा लेते हैं, तो तुम्हें अच्छा नहीं लगता। तुम मेरी हर खुशी क्यों छीन लेती हो रीमा ?''

''तुम्हारे और रिया के बीच जो कुछ पनप रहा है, वह ठीक नहीं। वह मेरी बेटी है। उसका भला–बुरा समझना मेरा काम है।''

''तुम उसकी माँ हो, यह मैं जानता हूँ। मगर वह भी अब बालिग है, अपना जीवन अपनी तरह जीने का उसे हक है। वह सुन्दर है, स्मार्ट है, मगर तुम्हारी तरह का आर्कषण नहीं। फिर भी उसमें तुम कहीं न कहीं हो।''

दिवाकर के दिन–ब–दिन रीमा के पारिवारिक परिधि में हस्तक्षेप से वह भीतर तक टूट रही थी। आखिरकार उसने यह नौकरी छोड़ देने का निश्चय कर लिया।

दूसरे दिन वह अपना इस्तीफा लेकर दिवाकर के पास गई मगर उसने अस्वीकार कर दिया। रीमा ऑफिस नहीं गई।

शाम ढलते ही दिवाकर आ धमका। रवि दौरे पर गये थे। रीमा ने उससे ठीक से बात नहीं की। रिया आज सुबह से ही अपनी ऐडफिल्म के लिए गई थी। रीमा के लिए यह अच्छा अवसर था, अब वह दिवाकर से–सारी बातें खुलकर कर सकती थी।

दिवाकर ने उत्तेजित स्वर में कहा– ''तुमने मुझे, मेरे विश्वास को क्षत–विक्षत किया है रीमा। मैं लंदन सिर्फ दो साल के लिए ही तो गया था, मगर तुम मेरे लिए प्रतीक्षा नहीं कर सकीं। तुम्हें शादी करने की बहुत जल्दी जो थी।''

रीमा दिवाकर के व्यंग्य बाणों से आहत होती रही। ''तुम्हारे अलावा मेरे माँ–पापा के रिश्ते भी तो थे। तुम क्या जानो इन रिश्तों के मजबूत बंधन को। तुम्हारे माता–पिता हमेशा अलग–अलग रहे। तुम तो लंदन जाकर मुझे भूल ही गये। तुम्हारी व्यस्तताएँ, पढ़ाई सब मैं जानने लगी थी। मेरे सब्र की भी सीमा थी दिवाकर। जो हो गया, हमें भूलना चाहिए।''

''भूल जाता तो इतने वर्षों तक अकेला नहीं रहता रीमा। मेरा भी एक छोटा–सा परिवार होता।''

''शायद इसीलिए तुम चाहते हो, मेरा परिवार भी बिखर जाए। तुम मुझसे प्रेम करने का दावा करते हो। प्रेम प्रतिदान नहीं, त्याग है दिवाकर।''

''रवि को पाकर मैं खुश हूँ दिवाकर। क्योंकि उनमें पत्नी और परिवार के दायित्व को समझ पाने की पूरी संवेदना है। मैंने तुम्हारे बारे में भी उन्हें बताया। मुझ पर उनका स्नेह बढ़ा ही, कम नहीं हुआ। पत्नी पर शंकालु दृष्टि रखने वाले पति अपने पारिवारिक जीवन को नष्ट करते हैं,

दिवाकर। यह सब मैं तुम्हें इसलिए कह रही हूँ क्योंकि तुम मेरे इस नीड़ को नष्ट कर रहे हो। जिसे हमने बरसों से सँवार कर रखा है। तुम मुझसे प्रतिशोध लेना चाहते हो। मेरी बच्ची रिया को तुम भ्रमित कर रहे हो। उसके मन पर क्या प्रतिक्रिया होगी, जब उसे तुम्हारे और मेरे बीच के प्रेम संबन्धों का ज्ञान होगा। वह बिखर जाएगी, दिवाकर। मगर मैं तुम्हें ऐसा नहीं करने दूँगी। क्या तुम्हें कभी अपनी वयस का ख्याल आया। तुम उसके मन की इच्छाओं को इन्द्रधनुष के रंगों में भ्रमित कर मृगतृष्णा के महासमुद्र में डुबो देना चाहते हो। मैं तुम्हारे मन में चल रहे प्रतिस्पर्धा के बवंडर को अच्छी तरह जान गई हूँ, दिवाकर। चले जाओ कभी लौट कर मत आना। रिया तो बच्ची है, वह तुम्हारे छद्मभेदी मन को नहीं जानती।''

''जानती नहीं थी माँ, पर अब सब जान गई हूँ। मैंने इनके बारे में सब कुछ जान लिया है। आई हेट दिस ब्लडी क्रीएचर माँ।''

रिया माँ के कन्धों से लिपटकर रोती रही। उसके अश्रुजल में अब तक चल रहे इस रोमांचक नाटक का पटाक्षेप हो चुका था। ◆

पता : 4/151, विशाल खण्ड, गोमती नगर,
लखनऊ–226010 (उ.प्र.)
मो. : 9838661663

लघुकथा

दिल का सुराख

❑ बंशीलाल परमार 'आशुतोष'

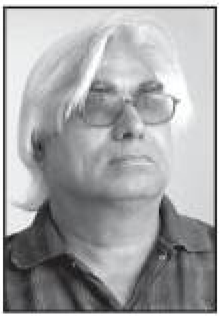

आज सुबह–सुबह ही भाई साहब का फोन आ गया कि मंदसौर आ जाओ। कुछ जरूरी बात करनी है तुमसे मिल कर। मैं पहली बस से निकल गया। भीड़ बहुत थी मगर कंडक्टर मेरा परिचित था। सो बीच की सीट मिल गयी। बस ने रफ्तार पकड़ी और पीछे की सीट से कुछ बातचीत सुनाई दी। न चाहते हुए भी मैं उसका हिस्सा बन कर सुनने लगा था।

'आपा आज कहां की सैर पर निकली हो?'

'अरे भैया कोई सैर–वैर पर नहीं निकली हूं मंदसौर वाले बड़े भाईजान के यहां अल्लाह ताला के करम से बड़ी मन्नतों के बाद बेटा हुआ है! सो उसे ही देखने जा रही हूं।'

'अरे वाह! बहुत–बहुत मुबारकबाद आपको फूफी बनने की। अच्छा जच्चा–बच्चा सब ठीक हैं आपा?'

'यही तो मसला है क्या बताऊं वो करम भी करता है और फिर इम्तिहान भी लेता है। बेटे से नवाजा तो डाक्टर ने बताया कि इसके दिल में सूराख है, और अहमदाबाद ले जा कर दिखाने को बोला है। इसीलिए मिलने जा रही हूं।'

'दिल में सूराख फिर तो बेकार में पैसे जाया करने हैं। इतने छोटे बच्चे को ठीक भी कर पायेंगे या नहीं, खुदा जाने।'

'आपा ने गहरी सांस लेते हुए कहा अब अल्लाह की मेहरबानी से बेटा हुआ है तो जितने रुपये लगेंगे, लगायेंगे, जहां तक सांस है, वहां तक आस है। हां, अगर लड़की होती तो बात अलहदा होती।'

अंतिम वाक्य सुनते ही मुझे एक झटका लगा, और मेरे दिमाग में एक प्रश्न उठा, कि बच्चे के दिल का सूराख तो डाक्टर ठीक भी कर देंगे, किन्तु इन लोगों के दिलों में जो गढ़्ढा है उसे——————?

पता : गायत्री मंदिर रोड, सुवासरा, जिला–मंदसौर (म.प्र.)–458888
मो : 9926494975

कदमों के निशान

❑ कुसुम अग्रवाल

कॉलबेल बजी। दोपहर के दो बजे थे। डाकिया अभी–अभी दो बाल पत्रिकाएं–चंपक और नंदन के नए अंक देकर गया था। मिसेज शर्मा ने दोनों पत्रिकाओं को हाथ में लेकर देखा। सुंदर आवरण से सुसज्जित, रंगीन चित्रों से परिपूर्ण तथा विविध स्तंभों से भरी हुई दोनों पत्रिकाएं बहुत ही आकर्षक लग रही थी। मिसेज शर्मा ने दोनों पत्रिकाएं लाकर लिविंग रूम में लगी सेंटर टेबल पर रख दीं।

"मोनू और मिकी स्कूल से आते ही होंगे। आते ही वे दोनों इस सेंटर टेबल के सामने लगे सोफे पर बैठते हैं। यदि पत्रिकाएं यहां पर पड़ी रहेगी तो दोनों की नजर अवश्य ही इन पर पड़ेगी।" मिसेज शर्मा ने सोचा और फिर भी रसोई में जाकर मोनू और मिकी के लिए खाने–पीने की व्यवस्था करने लगी क्योंकि स्कूल से आते ही वह उन्हें खाने के लिए फल देती थी।

"मोनू और मिकी किचन में से अपनी–अपनी प्लेट ले आओ।" मिसेज शर्मा ने मोनू और मिकी को कहा जो अभी–अभी स्कूल से लौटे थे और कपड़े बदल कर हाथ मुंह धो रहे थे।

मोनू और मिकी किचन में जाकर अपनी–अपनी प्लेट ले आए और आकर सोफे पर पसर गए, ठीक उन्हीं पत्रिकाओं के सामने। उन्होंने एक उचटती सी नजर दोनों पत्रिकाओं पर डाली। पत्रिकाएं कुछ आकर्षक नजर आई तो मोनू ने नंदन उठा ली और मिकी ने चंपक और फिर दोनों बड़ी लापरवाही से उनको उलटने–पलटने लगे।

इतनी ही देर में मिसेज शर्मा भी वहां आ गई। दोनों बच्चों के हाथ में पत्रिकाएं देखकर

उनके चेहरे पर सफल मुस्कान खेलने लगी। यही सोच कर तो उन्होंने दोनों पत्रिकाएं सेंटर टेबल पर रखी थी। अभी वह अपनी सफलता का आंनद ले रहीं थी कि अचानक से मिसेज शर्मा की नजर सामने लगी दीवार घड़ी पर पड़ी।

"अरे 2:30 बज गए। मेरा मनपसंद सीरियल चालू हो गया होगा।" यह कहते हुए उन्होंने झट से रिमोट हाथ में उठाया और टी.वी. चालू कर दिया। टी.वी में उनका मनपसंद सीरियल आ रहा था। मिसेज शर्मा बड़ी तन्मयता से सीरियल देखने बैठ गई।

उधर मोनू और मिकी ने कुछ देर पत्रिकाओं को उलटने–पलटने के बाद उन्हें फिर से टेबल पर पटक दिया और वह भी अपनी मां के साथ सीरियल देखने में व्यस्त हो गए। मिसेज शर्मा सीरियल देखने में इतनी तल्लीन थी कि उन्हें होश भी नहीं था कि मोनू और मिकी ना तो फल ही ढंग से खा रहे हैं और ना ही पत्रिकाएं पढ़ रहे हैं।

सीरियल खत्म होने पर जब उनकी तंद्रा टूटी तो उन्होंने देखा की मोनू और मिकी अपने कमरे में जा चुके हैं तथा सेंटर टेबल पर दोनों पत्रिकाएं तथा अधूरे खाए हुए फलों की प्लेटे रखीं हैं।

यह देख कर मिसेज शर्मा को थोड़ा गुस्सा भी आया परंतु इससे अधिक वह गहरी सोच में डूब गईं।

"यह आजकल के बच्चों को क्या होता जा रहा है? न तो खाने का होश है और न ही कुछ पढ़ने–लिखने का शौक। कई महीनों मैं नियमित रूप से यह दोनों पत्रिकाए मंगवा रही हूं ताकि इन दोनों में किताबें पढ़ने का शौक जागृत हो पर मजाल है इन्होंने कभी इन पत्रिकाओं को दस मिनट से भी अधिक हाथ में लिया हो। इन्हें तो बस टी.वी. दिखा दो या मोबाइल दे दो। घंटों उनमें आंखें गड़ाए बैठे रहेंगे। कुछ पढ़ने लिखने को कहो तो इन्हें या तो नींद आने लग जाती है या इनका सिर दुखने लग जाता है। सचमुच ये नई पीढ़ी तो हाथों से निकली जा रही है। कोई इन्हें अच्छे संस्कार सिखाएं तो कैसे? यह तो बड़ों की बात सुनने को ही तैयार नहीं। डांटो तो घंटों मुंह फुलाए रहते हैं।"

अभी मिसेज शर्मा यह चिंतन कर ही रही थी कि उनके मोबाइल की घंटी बजी। घंटी सुनकर मिसेज शर्मा अपने बेडरूम की ओर लपकी जहां मोबाइल पड़ा था। मोबाइल उठाया तो देखा कि उनकी सहेली कांता का फोन था। उन्होंने बेडरूम का दरवाजा बंद किया और मोबाइल लेकर पलंग पर फैल गईं।

"हेलो मिसेज शर्मा, मैं कांता बोल रही हूं।" उधर से आवाज आई।

हां, हां बोलो मैं तो नंबर देखते ही पहचान गई थी।" मिसेज शर्मा ऐसे बोली मानो नंबर पहचान कर आदमी पहचानना बुद्धिमत्ता का जाने कितना बड़ा प्रतीक हो।

"कल की किट्टी पार्टी किसके घर है?"

"आशा के घर।" मिसेज शर्मा ने जवाब दिया।

"अरे भई ! हमको तो कुछ पता ही नहीं चलता। कोई बताने वाला ही नहीं है। क्या थीम है अबकी बार?" उधर से फिर आवाज आई।

"इस बार सबको लहरिया पहन के जाना है तथा उसके साथ–साथ जूड़ा भी बनाना है।" मिसेज शर्मा ने बड़े गर्व से सूचना दी, मानो कितनी महत्वपूर्ण हो।

"भई हमारे तो बाल ही नहीं हैं। जूड़ा क्या बनाएंगे? कांता ने हंसते हुए कहा।

"नकली लगा लेना।" आजकल तो बाजार में सब कुछ मिलता है।" मिसेज शर्मा ने भी हंसते हुए कहा।

इसी तरह गपशप में न जाने कब एक घंटा निकल गया। मिसेज शर्मा को पता ही न चला और उन्हें पलंग पर लेटे–लेटे ही नींद आ गई। कुछ देर बाद जब उनकी नींद खुली तो शाम के पाँच बजे थे।

"अरे पाँच बजने वाले हैं। बच्चों के दूध का समय हो गया।" मिसेज शर्मा चौंककर उठी और सीधे बच्चों के कमरे की ओर गईं। दोनों बच्चे अभी तक सो रहे थे।

"मोनू मिकी, उठो 5:00 बज चुके हैं। उठकर दूध पियो और फिर होमवर्क करो।" मिसेज शर्मा ने बच्चों को उठाते हुए कहा और फिर रसोई में दूध बनाने चल पड़ी। दोनों बच्चे अंगड़ाई लेते हुए उठे।

मिकी ने कनखियों से देखा। मां रसोई में है वह झटपट पलंग पर से उठी और सीधा मां के कमरे में गई। कुछ देर इधर–उधर नजर दौड़ाने के बाद उसे पलंग पर पड़ा मोबाइल नजर आ ही गया। वह मोबाइल पर चील की तरह झपटी और इससे पहले कि मोनू उधर आता, वह मां के मोबाइल पर अपना कब्जा कर चुकी थी। मोबाइल चला कर

उसने झट से अपना मनपसंद गेम निकाला और खेलने लगी।

इतनी देर में मिसेज शर्मा दूध बना कर ला चुकी थी। मिकी को मोबाइल में उलझा देखकर उनका पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया।

"तुमने फिर से उठते ही मोबाइल हाथ में ले लिया। जाओ जाकर होमवर्क करो।" वह मिकी पर चिल्लाई।

"मम्मी प्लीज! थोड़ी देर तो खेलने दो। सुबह 5:00 बजे से उठे हैं। अभी वक्त मिला है मोबाइल को हाथ लगाने का।" यह कहकर मिकी फिर से मोबाइल गेम खेलने में व्यस्त हो गई।

मिसेज शर्मा झल्लाती हुई मोनू की ओर गईं। वह भी कंप्यूटर पर एक गेम खेलने में व्यस्त था।

"जब भी थोड़ा खाली वक्त मिलता है, दोनों बस मोबाइल गेम या वीडियो गेम में उलझ जाते हैं। इस खाली वक्त का उपयोग किताबें पढ़ने में भी तो किया जा सकता है? परंतु मजाल है कभी किताब पढ़ी हो। यह मोनू का बच्चा तो पूरे दिन इंटरनेट में ही उलझा रहता है। कभी मूवी देखता है तो कभी कोई सीरियल। चाहे उसे किसी बात की जानकारी लेनी हो या फिर प्रोजेक्ट वर्क करना हो तो भी उसे केवल और केवल इंटरनेट चाहिए। पीछे वाले कमरे में दर्जनों पुस्तकें पड़ी हैं। उनकी ओर नजर उठाकर भी नहीं देखता। मिसेज शर्मा बड़बड़ करती जा रही थी परंतु उनकी इस बड़बड़ाहट का असर दोनों बच्चों पर नहीं पड़ रहा था। वे दोनों अपने काम में तल्लीन थे।

रात के 8:00 बज चुके थे मोनू और मिकी अपना अपना होमवर्क पूरा कर चुके थे। अचानक डोर–बेल बजी। मोनू दरवाजे की ओर लपका क्योंकि उसे पता था कि वहां पापा होंगे। दरवाजा खोलते ही सबसे पहले उसकी नजर सदा की भांति अपने पापा के मोबाइल पर ही पड़ी।

"पापा प्लीज थोड़ी देर के लिए अपना मोबाइल मुझे दे दो। ये मिकी की बच्ची कब से मां के मोबाइल पर कब्जा जमाए बैठी है मुझे एक बार भी नहीं दिया उसने।" आते ही अपने पापा से शिकायत की परंतु पापा अभी मोबाइल देने के मूड में नहीं थे। लगता था वे किसी से वॉट्सऐप–चैटिंग कर रहे थे।

"नहीं बेटा, मैं अभी अपना मोबाइल नहीं दे सकता उन्होंने विक्की से कहा और फिर मोबाइल में खोए हुए ही सोफे पर आकर बैठ गए कि कब मिसेज शर्मा ने उनके सामने चाय लाकर रख दी, उन्हें पता ही न चला।

रात के खाने के कुछ ही देर बाद जब बच्चे सो गए तो मिसेज शर्मा ने अपने पति से कहा, "लाख कोशिशों के बावजूद मैं बच्चों को पत्रिकाओं की ओर आकृष्ट नहीं कर पा रही हूं। मुझे समझ नहीं आ रहा कि अबकी बार होने वाले साहित्यकार सम्मेलन में महिला मण्डल की प्रतिनिधि होने के नाते मैं क्या कहूंगी। मैं अपने भाषण में बार–बार इसी बात पर जोर देती हूं कि दिनोंदिन बच्चे साहित्य से दूर होते जा रहे हैं। किताबें हमारे जीवन का अभिन्न अंग हैं, अतः हमें बच्चों को फिर से साहित्य की ओर मोड़ना चाहिए परंतु सतत प्रयासों के बावजूद मैं स्वयं अपने बच्चों को साहित्य की ओर नहीं मोड़ पा रही हूं। अब आप ही बताइए कि मैं इस दिशा में प्रयास कैसे करूं?" अपनी बात कह कर मिसेज शर्मा ने अपने पति की ओर देखा परंतु शायद शर्मा जी ने पत्नी की बात पर गौर नहीं किया था क्योंकि वह पलंग पर लेटे–लेटे अपने मोबाइल में वीडियो देखने में व्यस्त थे। कुछ हां हूं करने के पश्चात वह बोले, "मैं बहुत थक गया हूं प्लीज मुझे सोने दो। बाकी बातें कल करेंगे।" और वे खर्राटे भरने लगे परंतु मिसेज शर्मा की आंखों में नींद नहीं थी। वे बच्चों और किताबों दोनो के भविष्य को लेकर बहुत चिंतित थीं।

अगला दिन मिसेज शर्मा के लिए व्यस्तताओं से भरा था। सुबह उठकर दिनचर्या निपटाने के बाद दोपहर में वह अपनी वार्डरोब खोल कर बैठ गई तथा किटी पार्टी में जाने के लिए साड़ी का चयन करने लगी। उनके पास लहरिए की तीन–चार साड़ियां थीं। यह नहीं, वह नहीं। करीब आधे घंटे तक चारों साड़ियों को उलट–पुलट करने के बाद अंत में वह इस नतीजे पर पहुंची पीले रंग का लहरिया पहनना ही ठीक रहेगा क्योंकि पीला रंग उन पर खूब फबता है। साड़ी पहनकर उन्होंने स्वयं को आईने में निहारा, तब उनकी नजर अपने बालों पर पड़ी।

–अरे जूड़ा भी तो बनाना है। यह कहकर वो फिर से जूड़ा बनाने में व्यस्त हो गईं तथा फिर मेकअप में। इस तरह करीब 2 घंटे की मशक्कत के बाद जब वे किट्टी में जाने लायक हो गईं तब उन्होंने बच्चों को आवाज लगाई।

"मोनू और मिकी, मैं सरोज आंटी के घर जा रही हूं।

आज हमारी किट्टी पार्टी है। मेरे पीछे से तुम दोनों अपना होमवर्क पूरा कर लेना तथा फिर कोई गेम खेल लेना या कोई किताब पढ़ लेना। कंप्यूटर चला कर मत बैठना।" बाहर जाते–जाते मिसेज शर्मा ने अपने दोनों बच्चों को ऐसे हिदायत दी मानो कितने आज्ञाकारी बच्चे हों।

किटी पार्टी में भी मुख्य चर्चा का विषय पति, बच्चे और सास होता था। जिसकी जो समस्या, वह उसी के बारे में बात करता था। मिसेज शर्मा ने भी अपने मन की बात छेड़ दी।

"मुझे लगता है कुछ दिनों बाद किताबें छपना ही बंद हो जाएंगी क्योंकि जिस तरह मोबाइल और कंप्यूटर के प्रयोग से बच्चों की आदतें बिगड़ती जा रही हैं, उन्हें फिर से पुस्तकों की ओर मोड़ना असंभव लग रहा है। वे यह समझने को तैयार ही नहीं कि जो सुखद अनुभूति पुस्तकें पढ़ने से होती है वह इन इलैक्ट्रॉनिक चीजों से कभी नहीं हो सकती।" उन्होंने अपनी पीड़ा सभी सखियों के आगे रखी परंतु फिर उन्हें लगा कि उनकी यह बात नक्कारखाने में तूती के समान फिर साबित हुई क्योंकि किट्टी पार्टी की रंगीनियों में किसी को ऐसी गंभीर समस्या पर चिंतन करने में रुचि नहीं थी। किट्टी में भी मिसेज शर्मा का मन उचाट ही रहा और वह जिस चिंता को लेकर वहां गईं थीं, उसी चिंता को लेकर वापस लौट आईं।

घर पहुंची तो मेन गेट आधा खुला हुआ था।

"ये बच्चे भी कितने लापरवाह होते जा रहे हैं।" वह चिंतित तो थी ही, गेट खुला देख कर उनकी बड़बड़ाहट फिर शुरू हो गई। गेट बंद कर, बरामदे में पहुंचकर अभी वह दरवाजा खोलने के लिए घंटी बजाने ही वाली थी कि उन्होंने देखा–खिड़की पर लगा पर्दा थोड़ा सरका हुआ था। उन्होंने खिड़की में से झांका। खिड़की में से उन्होंने जो दृश्य देखा उसे देखकर उन्होंने घंटी बजाने की बजाए चुपचाप थोड़ी देर और वहीं खड़े रहना उचित समझा।

उन्होंने देखा मोनू और मिकी अपने दो अन्य मित्रों के साथ एक नाटक खेल रहे हैं जिसमें मोनू पापा का रोल अदा कर रहा है तथा मिकी मम्मी का। शेष दोनों बच्चे उनके बच्चों का रोल अदा कर रहे हैं।

मोनू सोफे पर बैठा है। वह अभी–अभी ऑफिस से आया है तथा उसके हाथ में मोबाइल है। मिकी उसके पास आई और बिल्कुल अपनी मां के अंदाज में बोली," ये आजकल के बच्चे बहुत परेशान करते हैं। न कुछ खाते हैं ना पीते हैं न ही किताबें पढ़ना चाहते हैं। आप ही बताइए मैं क्या करूँ?"

पापा बने मोनू ने मिकी की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह अपने मोबाइल में ही खोया रहा। थोड़ी देर बाद मिकी ने फिर कहा, "ठीक है आप मोबाइल में ही खोए रहिए। मुझे भी समय नहीं है। मुझे किट्टी पार्टी में जाना है। यह सुनते ही मिसेज शर्मा ने मिकी की ओर ध्यान से देखा। मिकी साड़ी पहने हुई थी तथा उसने जूड़ा भी बनाया था। उसे इस वेशभूषा में देखकर वह मुस्कुराए बिना न रह सकीं। वह बिल्कुल छोटी मिसेज शर्मा लग रही थी।

विक्की बोला, "लगता है तुम्हारी किट्टी का थीम साड़ी और जूड़ा है।" और वह मुस्कुराने लगा।

इस पर मिकी ने कहा, "हां साड़ी, वह भी लाल रंग की। देखो मैंने इसीलिए लाल रंग की साड़ी पहनी है। कहकर मिकी हाथ में पर्स लेकर किट्टी में जाने का नाटक करने लगी। मिसेज शर्मा ने मिकी को चलते हुए देखा। मिकी हूबहू उसकी नकल कर रही थी।

बच्चों का यह अभिनय देखकर मिसेज शर्मा को थोड़ा गुस्सा भी आया और साथ ही हंसी भी।

"ये बच्चे भी। बड़ों की हूबहू नकल कर लेते है।" उन्होंने भी मन ही मन मुस्कुराते हुए कहा या फिर अपने माता पिता के ही पद चिन्हों पर चलते हैं। हां सच है। बच्चे अपने बड़ों के और माता–पिता के पदचिन्हों पर तो चलते हैं यानि जो देखते हैं, वही सीखते हैं।

उन्होंने बार–बार इस बात को दोहराया और उस पर मनन किया और अंत में इस नतीजे पर पहुंची कि वास्तव में बच्चे अपने माता पिता के पदचिन्हों पर ही चलते हैं।

और इसी नतीजे पर पहुंच कर उन्होंने मुस्कुराते हुए कॉल बेल बजा दी क्योंकि शायद अभी–अभी उन्हें अपनी समस्या का समाधान मिल गया था जिसके लिए वह कई दिनों से परेशान थीं। अब उन्हें यह लग रहा था कि वह शीघ्र ही अपने बच्चों को पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रेरित कर सकेंगी। हां, आदर्श बन कदमों के निशां तो उन्हें बनाने ही पड़ेंगे। ◆

पता : 90–महावीर नगर, 100 फीट रोड, (राजसमंद)
राजस्थान–313324
मो. : 09461179465

अदृश्य दरवाजा

❑ अर्चना राजपूत

बहुत समय पहले, पहाड़ों और घने जंगलों के बीच बसा एक छोटा–सा गाँव था, जिसका नाम था सूर्यगढ़। गाँव के लोग मेहनती और खुशहाल थे। गाँव के पास एक पुराना जंगल था, जिसके बारे में कई रहस्यमयी कहानियाँ प्रचलित थीं। लोग कहते थे कि जंगल के बीचों–बीच एक ऐसा दरवाजा है जो सिर्फ उस व्यक्ति को दिखाई देता है जिसके दिल में लालच नहीं होता।

गाँव में नयन नाम का एक युवक रहता था। वह बहुत जिज्ञासु था और नई–नई चीजें जानने का शौक रखता था। बचपन से ही उसने उस रहस्यमयी दरवाजे की कहानी सुनी थी। कई लोग उसे ढूँढने गए, लेकिन कोई भी उसे नहीं देख पाया। कुछ लोग वापस लौट आए और कुछ ने यह मान लिया कि वह सिर्फ एक कल्पना है।

एक दिन नयन ने तय किया कि वह उस रहस्य का पता लगाएगा। अगले ही सुबह वह अपने साथ थोड़ा भोजन, पानी और एक नक्शा लेकर जंगल की ओर निकल पड़ा। जैसे–जैसे वह जंगल के अंदर जाता गया, पेड़ और घने होते गए। पक्षियों की आवाजें धीरे–धीरे कम होने लगीं और चारों ओर एक अजीब–सी शांति फैल गई।

चलते–चलते उसे एक बूढ़ा साधु मिला। साधु एक बड़े पत्थर पर बैठा था। नयन ने उन्हें प्रणाम किया और पूछा, "बाबा, क्या आप उस रहस्यमयी दरवाजे के बारे में जानते हैं?"

साधु मुस्कुराए और बोले, "जानता हूँ, लेकिन उसे ढूँढना आसान नहीं है। वह दरवाजा आँखों से नहीं, मन से दिखाई देता है।"

नयन ने पूछा, "मैं उसे कैसे देख सकता हूँ?"

साधु ने उत्तर दिया, "जंगल तुम्हारी परीक्षा लेगा। यदि तुम हर परीक्षा में सही निर्णय लोगे, तभी तुम्हें वह दिखाई देगा।"

यह कहकर साधु वहाँ से गायब हो गए। नयन आश्चर्यचकित रह गया, लेकिन उसने अपनी यात्रा जारी रखी।

थोड़ी दूर जाने पर उसे एक घायल हिरण दिखाई दिया। उसके पैर में काँटा चुभा हुआ था। नयन जल्दी में था, क्योंकि वह दरवाजा ढूँढना चाहता था। लेकिन उसने सोचा कि पहले हिरण की मदद करनी चाहिए। उसने सावधानी से काँटा निकाला और हिरण को पानी पिलाया। हिरण कुछ देर बाद उठ खड़ा हुआ और जंगल की ओर दौड़ गया।

नयन आगे बढ़ा। कुछ समय बाद उसे रास्ते में सोने के सिक्कों से भरा एक थैला मिला। उसने सोचा कि यदि वह इसे अपने साथ ले जाए तो बहुत अमीर बन सकता है। लेकिन फिर उसे लगा कि यह किसी और का हो सकता है। उसने थैला वहीं छोड़ दिया और आगे बढ़ गया।

शाम होने लगी थी। तभी उसे एक छोटी लड़की रोती हुई दिखाई दी। लड़की ने बताया कि वह रास्ता भटक गई है और अपने घर नहीं पहुँच पा रही। नयन थका हुआ था, लेकिन उसने लड़की की मदद करने का निर्णय लिया। वह उसे उसके गाँव तक छोड़कर आया। जब वह वापस लौटा, तब तक रात हो चुकी थी।

नयन को लगा कि अब उसकी पूरी यात्रा व्यर्थ हो गई है। उसने पूरे दिन दरवाजा नहीं देखा। निराश होकर वह एक पेड़ के नीचे बैठ गया।

तभी अचानक उसके सामने एक सुनहरी रोशनी प्रकट हुई। रोशनी धीरे–धीरे फैलने लगी और उसके बीच एक विशाल दरवाजा दिखाई दिया। दरवाजा चाँदी और सोने की नक्काशी से बना हुआ था। उसे देखकर नयन की आँखें आश्चर्य से फैल गईं।

दरवाजा धीरे–धीरे खुला और भीतर से एक मधुर आवाज आई, "स्वागत है, नयन।"

नयन अंदर गया। उसने देखा कि वहाँ एक अद्‌भुत संसार था। चारों ओर हरियाली थी, चमकते हुए झरने थे और हवा में सुगंध फैली हुई थी। वहाँ एक वृद्ध व्यक्ति खड़े थे।

उन्होंने कहा, "यह स्थान उन लोगों के लिए है जो स्वार्थ से ऊपर उठकर दूसरों की भलाई करते हैं। आज तुम्हारी तीन परीक्षाएँ हुईं। घायल हिरण की सहायता करना, सोने के सिक्कों का लालच छोड़ना और खोई हुई लड़की की मदद करना। तुम हर परीक्षा में सफल हुए।"

नयन ने पूछा, "क्या मुझे कोई खजाना मिलेगा?"

वृद्ध मुस्कुराए और बोले, "हाँ, लेकिन वह सोना–चाँदी नहीं है।"

उन्होंने नयन को एक छोटा–सा क्रिस्टल दिया। "इसमें ज्ञान की शक्ति है। जब भी तुम किसी समस्या का समाधान खोजोगे, यह तुम्हें सही दिशा दिखाएगा।"

नयन ने क्रिस्टल स्वीकार कर लिया और गाँव लौट आया।

समय बीतता गया। उस क्रिस्टल की सहायता से उसने खेती के नए तरीके खोजे, पानी बचाने के उपाय बनाए और गाँव के बच्चों को शिक्षा देने में मदद की। धीरे–धीरे सूर्यगढ़ पूरे क्षेत्र का सबसे समृद्ध गाँव बन गया।

लोग अक्सर उससे पूछते थे, "तुम्हारी सफलता का रहस्य क्या है?"

नयन मुस्कुराकर कहता, "सफलता का सबसे बड़ा रहस्य दूसरों की मदद करना और सही रास्ता चुनना है।"

कई वर्षों बाद, जब नयन बूढ़ा हो गया, तब उसने फिर उस जंगल का रुख किया। लेकिन इस बार उसे कोई दरवाजा नहीं मिला। तभी उसे साधु की बात याद आई। दरवाजा आँखों से नहीं, मन से दिखाई देता है। उस दिन नयन समझ गया कि असली खजाना वह जादुई संसार नहीं था, बल्कि वह अच्छाई थी जो उसकी यात्रा के दौरान उसके भीतर जागी थी। और तभी से सूर्यगढ़ के लोग अपने बच्चों को यह कहानी सुनाने लगे कि जीवन में सबसे बड़ा खजाना धन नहीं, बल्कि ईमानदारी, दया और निःस्वार्थता है। ◆

पता : बहद करूदी, बक्सी का तालाब,
लखनऊ (उ.प्र.)–227202
मो. : 9555649655

खुशियों के गुलाब

❑ रेणु गुप्ता

आज अपने देश में पहले दिन बाबू जी के घुटनों पर दर्दनाशक तेल से मालिश करके मैंने उनसे पूछा, "बाबू जी, दर्द में कुछ आराम मिला?"

बाबू जी के रुग्ण चेहरे पर गड्ढों में धंसी धुंधली आँखों में जैसे जुगनू चमक उठे।

अनायास मन अतीत के गलियारों में भटकने लगा।

प्रतिष्ठित संस्थान से एमबीए करते ही अमेरिका की ख्यातिलब्ध एमएनसी में दो करोड़ के वार्षिक पैकेज पर मेरी नौकरी लग गयी थी। एक शानदार करियर की मृग मरीचिका के पीछे–पीछे मैं पराये देश जा पहुँचा। मन भीतरी तह तक तृप्त था। अफसोस था तो बस यही कि मैं बाबू जी को इंडिया में नितांत अकेला छोड़कर आ गया था, उम्र के उस पड़ाव पर, जब इंसान तन और मन दोनों से छीज जाता है।

मैंने उनसे कितना इसरार किया, अमेरिका मेरे पास आने के लिए, लेकिन वे उसके लिए कतई नहीं माने। मैं मन ही मन उन्हें अपनी दी हुई अकेलेपन की सजा भोगते देख अपराध भाव से भर जाता।

उधर उम्र बढ़ने के साथ–साथ उनका गठिया उग्र होता जा रहा था। वे खुद तो मुझसे कुछ न कहते, लेकिन उनका चेहरा उनकी पीड़ा और दर्द की चुगली कर ही देता, और मैं सतत अपराध भाव से ग्रस्त रहता।

मुझे अमेरिका में रहते हुए दस बरस होने को आए थे। उन्हीं दिनों जोड़ों में असहनीय दर्द की वजह से बाबू जी बिस्तर पर आ गए। मैंने झट अपनी इंडिया की टिकट करवाई और मैं उनके पास अवकाश ले कर आ गया। वापसी पर बाबू जी आर्द्र दृष्टि से मुझे देख रो पड़े थे, और उन्हें रोता हुआ देख मेरा कलेजा मुँह को आ गया। उनकी तरल दृष्टि मेरे मानस पटल पर मानो छप गयी थी, जो जब–तब मुझे हॉन्ट करती।

मात्र एक अटेंडेंट के साथ अपना दर्द और अकेलापन बांटते बाबू जी दिन पर दिन बेहद कमजोर होते जा रहे थे। अचानक एक दिन वे बेहोश हो गए। अटेंडेंट ने उन्हें अस्पताल में भर्ती करवा दिया।

वीडियो कॉल पर उनकी सूनी आँखों में घनीभूत दर्द और उन्हें तन–मन से जर्जर देख मन सोच में पड़ गया, 'बाबू जी को कुछ हो गया तो? उनके सिवा मेरा इस दुनिया में है ही कौन?' और बहुत सोच–विचार कर मैंने अमेरिका छोड़ हमेशा के लिए इंडिया लौटने का निर्णय लिया।

मैं बाबू जी के पास आज सुबह ही तो लौटा था।

तभी बाबू जी ने क्षीण आवाज में मुझसे पूछा, "अब वापस कब जाएगा?" और मैं वर्तमान में आया।

मैंने किंचित मुस्कुराते हुए उनका हाथ थाम उन्हें जवाब दिया, "बाबू जी, अब कभी नहीं।"

'यह सुनकर उनके चेहरे पर खुशियों के जो गुलाब खिले, क्या उससे बेशकीमती कुछ और है?' ◆

पता : जी–2, प्लॉट नंबर–61, रघुविहार, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर, राजस्थान 302018
मो. : 9024579762, 9079239527

कविता

करुणा व्यापार नहीं करती

सुमन यादव

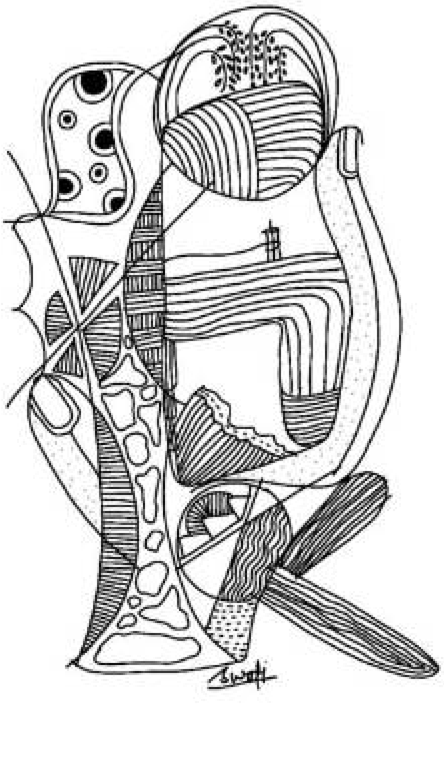

रक्त–तप्त सा मुख लिए,
करुणा व्यापार नहीं करती।
अनुरक्ति तपस्या करती हो,
फिर क्यों शृंगार नहीं करती।।

मैं देख रहा हूँ अश्रु तेरे,
मैं क्या देखूँगा केशों में?
आलोक, विरह, संवेग, चित्त
अब रहता हूँ इन भेषों में।।

निरस्तब्ध खड़ा मैं देख रहा,
टूटे मन की करुणा–गुंजन।
अब मैं किसको बतलाऊँ,
अपनी तृष्णा, अपना जीवन।।

है छिन्न–खिन्न अनुभूति मेरी,
पल्लव मेरा भी सूख गया।
तुमने जब सोचा मरने का,
आघात सहित मैं डूब गया।।

पर एक साँझ वह आएगी,
जब हम दोनों मिल जाएंगे।
क्योंकि बातें तो मर जाती,
पर उनकी गूँज नहीं मरती।।

अनुरक्ति तपस्या करती हो,
फिर क्यों शृंगार नहीं करती।।

◆

पता : 539खा–791, छोटी जुगौली, गोमती नगर, लखनऊ
मो. : 8738879622

पास हमारे बैठो

रमेश चंद्र पंत

काम–काम
हर समय काम ही,
थोड़ा पास हमारे बैठो!

अलस्सुबह ही तुम उठ जातीं
दिन–भर ही खटती रहती हो,
ना जाने कितने हिस्सों में
हर क्षण ही बँटती रहती हो,

लूँ निहार मैं
जी–भर तुमको,
थोड़ा पास हमारे बैठो!

बिछुआ–पायल चूड़ी–कंगन
जैसे इनको भूल गई हो,
चूल्हा–चौका झाड़ू–बर्तन
बस इनमें ही डूब गई हो,

लूँ थकान मैं
चेहरे की पढ़,
थोड़ा पास हमारे बैठो!

नहीं स्वयं के लिए कभी भी
मैंने तुमको चिंतित देखा,
बस औरों के लिए ही जीना
जैसे लिखी हाथ में रेखा,

मन की उलझन
मैं सुलझा दूँ,
थोड़ा पास हमारे बैठो!

मंदिर में तो ठाकुर जी भी
तुम पर ही हैं निर्भर रहते,
और चपलता देख तुम्हारी
हरदम ही हैं हँसते रहते,

बचा काम
कर लेना फिर तो,
थोड़ा पास हमारे बैठो!

◆

पता : विद्यापुर वार्ड,निकट जी.आई.सी.,
रानीखेत रोड, द्वाराहाट, अल्मोड़ा,
उत्तराखण्ड–263653
मो. : 9639373737

खुशी की चाहत

नरेन्द्र सिंह 'नीहार'

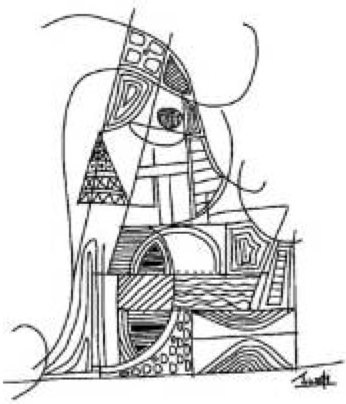

खुशी की चाहत

सबकी चाहत में शामिल है,
हंसी–खुशी से जीना।
फिर क्यों होते झगड़े–टंटे,
सोचो यार कभी ना।
मन की गांठ खोलो प्यारे,
सबको अपना मानो।
सोचो समझो तोलो बोलो,
मंत्र इसी को जानो।
सुबह सवेरे जल्दी उठकर,
चलो सैर पर घूमें।
हरी–भरी है धरती अपनी,
संग हवा के झूमें।
नहीं अपेक्षा करो किसी से,
छोड़ो चिंता भारी।
अच्छे भाव सँजोकर मन में,
हो हसने की तैयारी।
जैसा अन्तर वैसा बाहर,
फूलों सा खिल जाएगा।
मन मयूर जब–जब झूमेगा,
चेहरा भी मुस्काएगा।

◆

मैं भी खुश हो जाऊँ

कितने ही नम्बर ले आऊँ,
खुश न होते मम्मी–पापा।
थोड़ा सा भी कम रह जाएं,
अक्सर खो देते हैं आपा।
आँख गड़ाकर पढ़ूं रात–दिन,
नहीं चैन से रह पाऊँ।
कोई मुझे बता दे आकर,
मैं भी थोड़ा खुश हो जाऊँ।
बेशक कम नम्बर आते हों,
बबलू तो खुश ही रहता
दिन भर रमता खेलकूद में,
कोई नहीं कुछ कहता।
काश कि नम्बर वाली चिंता,
छूमंतर हो जाए।
मैं भी थोड़ा खेलकूद लूँ,
मन हर्षित हो जाए।
मम्मी–पापा भी यह समझे,
बहुत जरूरी खुश रहना।
बिगड़े सारे काम बनें,
खुशियाँ ही असली गहना।

◆

पता : ए–67/बी, दुर्गा विहार, देवली गांव,
नई दिल्ली–1100080
मो. : 9873299789

सेवा मुक्ति

नील मणि

(1) सेवा–मुक्ति

मन कभी संदेह कभी
आकांक्षा की परछाईं है
बुढ़ापे के आतंक की
घटा गहरी छाई है
सोच ने सोच को थामा–
हर पल ही तो हम
सेवा–मुक्त होते हैं–
चाय बनी घूँट लिया...
क्षण भर का विश्राम
भोजन किया– संतोष मिला...
तत्पश्चात विराम
सेवा और सेवा–मुक्ति
कोई अंत नहीं
यह तो हर कर्म के बीच
मिलने वाला
छोटा सा विश्राम है
यहीं जीवन साँस लेता है
यहीं भीतर का संतुलन
धीरे–धीरे बहता है
रिटायरमेंट
काम से मुक्ति नहीं–
यह स्वयं से जुड़ने का
एक नया अवसर है
नया सीखना, चैतन्य रहना है
न उपेक्षित न उदास होना है
शांति को ढूँढ़ना नहीं–
हर पल अनुभव करना है
यही असली खजाना है
यही जीवन रत्न–
जिसे अब संचित करना है।

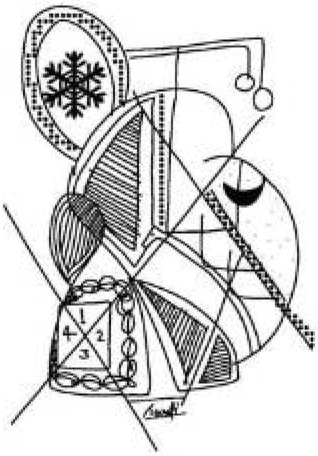

(2) बेफिक्री

वे खुशनसीब हैं
जिन्हें बेफिक्र जिंदगी नसीब है
जिनके सपनों पर
जिम्मेदारियों की धूल नहीं जमी
जिनकी सुबहें
अलार्म नहीं, बेफिक्री से खुलती हैं
और रातें
हिसाब–किताब से पहले सो जाती हैं
हम तो
हर मुस्कान के पीछे
चिंताएं छिपाए फिरते हैं
हर खुशी से पहले
एक अगर जोड़ लेते हैं
काश
कभी ईश्वर पूछे–
तुम्हें क्या चाहिए?
और हम कह सकें–
बस थोड़ी सी बेफिक्री।

◆

पता : सी–27, राधा गार्डन, मवाना रोड,
मेरठ–250001 (उत्तर प्रदेश)
मो. : 9412708345

मन सर

श्याम नारायण सिंह 'अघोर'
आई.पी.एस.

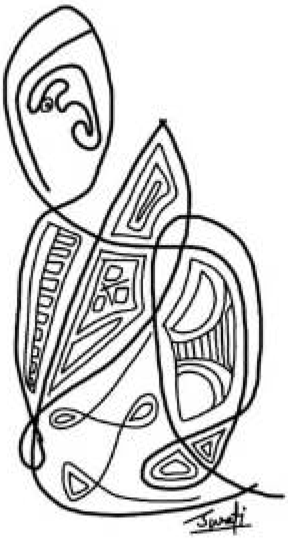

(1)

नील घन राशि रूप, लोटत महि धूरि भरे।
पीत सी झंगुरिया, छींटों दुति तारिका हौं।।
बोलत रसाल लरबरात, माइ तौतिल सुन।
गोद में उठाइ धाइ, मातु पुचकारत हौं।।
शेष विधि शंभु जासु, ध्यान कलप कोटि करें।
पावत नहिं पार, मति शारदा की मौन रहैं।।
छोटी सी धनुहिया औ बान बिना रोइ रहे।
देत नहिं मातु, कौशिल्या सशंक रहैं।।

(2)

जासु नाम सुमिरन तें, होत भव–सागर पार।
भृकुटि विलास तें, कोटि काल डरपत हैं।।
जासु रुख पाइ, सृजति ब्रह्मांड कोटि।
तासु मातु प्रेम बस, धनुहिया सों डरपत हैं।।
गोद में उठाइ पोंछि, दृगबिन्दु अंचरा से।
अंजन लगाइं चिबुक, नजर उतारत है।।
बलि–बलि जाऊँ मैया, तेरो प्रेम पूरन को।
अंचरा की छांह जहाँ, बाल राम रोवत हैं।।

◆

पता : सेनानायक एसडीआरएफ, उ.प्र. सरोजनीनगर, लखनऊ
मो. : 226008
मो. : 7905215332

गंभीर स्त्री विमर्श का दस्तावेज है सरोज कुमारी की पुस्तक

❑ उमंग वाहाल

नव वर्ष के आरंभिक समय में ही हमें एक अत्यंत उपयोगी पुस्तक 'साहित्य का स्त्रीवादी पाठ' प्राप्त हुई है। विचार–विमर्श और आलोचना के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाती एक और विचारक साहित्यिक फलक पर उभर रही हैं। प्रो. सरोज कुमारी (हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय) अपनी लेखनी और अपने अनुभव के आधार पर अकादमिक जगत में हर वर्ष एक मील का पत्थर प्रस्तुत करती आई हैं। भावना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक के विमोचन में विभिन्न विद्वानों जैसे– "वरिष्ठ आलोचक अब्दुल बिस्मिल्लाह, आलोचक गोपेश्वर, वरिष्ठ कवि मदन कश्यप, वरिष्ठ कवयित्री सविता सिंह, आलोचक एवं कथाकार सुजाता, रचनाकार संतोष पटेल, संपादक पंकज शर्मा आदि ने इस पुस्तक विमोचन में पहुंचकर इस अवसर को और भी समृद्ध और ज्ञानवर्धक बना दिया।

सर्वप्रथम वरिष्ठ कवयित्री सविता सिंह जी ने लेखिका को बधाई देते हुए कहा कि आमतौर पर हिन्दी लेखन में लोग संदर्भों के प्रति अधिक चिंतित नहीं रहते हैं। कुछ लोगों के लिए यह एक मुश्किल या गैर–जरूरी कार्य है लेकिन इस पुस्तक की लेखिका ने बारीकी से इस कार्य को किया है। यह बहुत जरूरी है कि स्त्री आलोचना पर इस प्रकार का कार्य साहित्यिक–पटल पर आए क्योंकि अधिकतर लोग अज्ञानतावश स्त्री आलोचना, दृष्टि और भाषा को ही नकार देते हैं। ऐसे विरोधाभास के बीच इस पुस्तक का आना एक महत्वपूर्ण प्रयास है। जो स्त्रियाँ लेखन कार्य में हैं, उन्हें क्या कुछ झेलना होता है, यह सब इस पुस्तक में हैं। वर्तमान समय में पुरुष आलोचक जब तक स्त्री आलोचना को नहीं पढ़ेंगे, वे स्त्री–चेतना को भी नहीं जान पाएंगे। यह किताब इस मामले में एक निडर प्रयास है।

इसके उपरांत बहुचर्चित आलोचक व कथाकार सुजाता ने "साहित्य का स्त्रीवादी पाठ" पर अपनी स्पष्ट और सटीक प्रतिक्रिया दी। वे लेखिका को बधाई देते हुए इस पुस्तक की विशेषता बताती हैं कि यह पुस्तक स्त्रीवाद के उस पक्ष की हिमायत करती है जिससे एक सजग स्त्री पाठक का निर्माण हो सके। सिमोन दी बॉउवार की बात "ONE IS NOT BORN, BUT RATHER BECOMES, A WOMAN" (स्त्री पैदा नहीं होती, बल्कि बना दी जाती है।) को पुनः

स्मरण करते हुए सुजाता ने कहा कि इस पुस्तक के केंद्र में उसी स्त्री के चिंतन को रखा गया है। यह पुस्तक किसी टेक्स्ट का "स्त्री–पाठ" बनाने पर जोर देती है। इसके हर पाठ में यह प्रश्न उठाया जा रहा है कि अब तक की जो हिन्दी आलोचना होती आ रही है उससे तो स्त्री का 'लेखकत्व' और 'पाठकत्व' दोनों ही खतरे में हैं। दुर्भाग्यवश बहुत–सी लेखिकाएँ और स्त्रियाँ स्त्रीवाद के लेबल से बचने की कोशिश करती हैं परिणामस्वरूप स्त्रीवाद को हाशिये पर धकेला जा रहा है। ऐसे में यह पुस्तक एक सराहनीय कार्य बनकर सामने आई है यह पढ़ी जाए, सराही जाए और बहुत से लोगों की प्रेरणा बने। प्रो. पंकज शर्मा ने कहा कि लेखिका ने 'स्त्री–विमर्श' को 'स्त्रीवाद' तक विस्तार दिया है। इस पुस्तक में एक तथ्यपरक प्रस्तुति की गई है जिसकी मात्र टिप्पणी करके ही इतिश्री नहीं कर ली गई है अपितु साथ में हर स्थान पर यथोचित संदर्भ भी जोड़ा गया है। इस पुस्तक में भक्तिकाल से लेकर आधुनिक काल तक इतनी लंबी शृंखला प्रस्तुत की गई है जो एक सराहनीय सार्थक अकादमिक प्रयास है। इस पुस्तक में स्त्रीवाद की एक व्यापक रूपरेखा खींची गई है।

अब्दुल बिस्मिल्लाह ने भी सरोज जी को उनकी इस उपलब्धि पर पर बधाई दी। वे कहते हैं कि लेखिका अपने लेखन, चिंतन–मनन के साथ ही विविध मंचों पर बोलने में बहुत ही सक्रिय रहती हैं। लेखिका के भीतर एक नई प्रकार की गंभीर रचनाशीलता है जो इनके प्रकाशित कार्य में स्पष्ट रूप से झलकती है। इस पुस्तक में संकलित सामग्री, सम्पादन का एक अद्भुत उदाहरण है जो वर्तमान समय के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। वरिष्ठ कवि मदन कश्यप ने कहा लेखिका ने अपने जीवन में संघर्ष किया है वही इनकी रचनाशीलता में भी 'रचना–संघर्ष' के रूप में उभरता दिखता है। आज जो स्त्री लेखन हो रहा है, उस पर इस पुस्तक में जिस प्रकार गंभीर विचार किया गया है वह महत्वपूर्ण है। उन्होंने सुजाता जी की बात का समर्थन करते हुए कहा कि स्त्री के विषय में की गई आलोचना को स्त्रीवादी आलोचना कहना ही अधिक उचित प्रतीत होता है क्योंकि जो लोग स्त्री के नजरिए से चीजों को देखते और समझते हैं, उनके लिए इस अर्थ में एक उपयुक्त स्पेस बन जाता है। इस पुस्तक में बड़ी कविताओं और रचनाओं के स्त्री–पाठ की जरूरत का प्रश्न उठाया गया है जो बेहद जरूरी है जिससे एक नया गवाक्ष खुलेगा और नये अर्थ सामने आएंगे। यह एक ऐसा प्रयास है जो और महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि इसमें 'स्त्री आलोचना की भी आलोचना' की गई है।

संतोष पटेल ने किताब के विमोचन पर सर्वप्रथम लेखिका को बधाई दी। उन्होंने कहा कि स्त्रीवादी पाठ की ऐसी प्रस्तुति सराहनीय है। यह पुस्तक स्त्रीवाद के अनेक स्तरों को हमारे समक्ष रखती है। पूरी पुस्तक पढ़ने के लिए उन्होंने अपनी उत्सुकता प्रकट की।

समकालीन भारतीय साहित्य पत्रिका के संपादक बलराम ने भी सरोज कुमारी के लेखन और चिंतन–मनन की सराहना की, साथ ही सर ने बधाई भी दी।

कुल मिलाकर यह पुस्तक विमोचन स्त्री आलोचना के विभिन्न स्तरों को परत दर परत हमारे सामने रखने वाला महत्वपूर्ण क्षणों का साक्षी बना जो आज के समय में हिन्दी साहित्य और मुख्यधारा की आलोचना के लिए अत्यधिक आवश्यक है। साहित्य जगत में इस अत्यंत उपयोगी पुस्तक के आगमन पर सरोज कुमारी को बहुत शुभकामनाएँ और बधाई। भविष्य में भी लेखिका से इस प्रकार के और भी महत्वपूर्ण आलोचनात्मक कार्य की आशा रहेगी। ◆

रिपोर्ट प्रस्तुति– उमंग वाहाल, सहायक अध्यापक (अतिथि), विवेकानंद महाविद्यालय

पता : शोधार्थी–पीएच.डी., हिन्दी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय
मो. : 9205409875

चलो प्यार से रहा जाए

रतन कुमार श्रीवास्तव 'रतन'

चलो प्यार से रहा जाए,
इक धार में बहा जाए।
क्या राम, क्या रहीम?
गले सब के लगा जाए।
चलो प्यार से रहा जाए।।

चलो सबसे मोहब्बत करें,
दूर दिलों से नफ़रत करें।
क्या हिंदू, क्या मुस्लिम?
मिलकर साथ चला जाए।
चलो प्यार से रहा जाए।।

ग्रंथ सभी के पूजनीय हैं,
सभी के लिए वंदनीय हैं।
क्या गीता, क्या कुरान?
मिलकर सब पढ़ा जाए।
चलो प्यार से रहा जाए।।

सभी जगह रब रहते हैं,
बस; जुदा–से दिखते हैं।
क्या मंदिर, क्या मस्जिद?
खुद में ही उन्हें ढूँढ़ा जाए।
चलो प्यार से रहा जाए।।

सबका मालिक जब एक है,
रंग–ए–ख़ून जब एक है।
क्या मौलवी, क्या पुजारी?
इंसान ही नेक बना जाए।
चलो प्यार से रहा जाए।।

क्या केसरिया, क्या हरा,
क्या लाल, क्या सुनहरा।
छोड़ रंग सारे पंथों का,
प्रेम के रंग में रंगा जाए।
चलो प्यार से रहा जाए।।

ग़रीब हों कि वे अमीर हों,
'तुलसी' हों कि 'कबीर' हों।
बस; हो जिनमें इंसानियत,
रिश्ता उनसे ही गढ़ा जाए।
चलो प्यार से रहा जाए।।

पता : 1/1358, रतन खण्ड
(निकट–संत गाडगे जलाशय)
शारदा नगर योजना,
लखनऊ–226002
मो. : 9454410101

भारत सरकार के रजिस्ट्रार आफ न्यूज पेपर्स की रजिस्ट्री संख्या 33122/78
भारतीय डाक विभाग की डाक पंजीयन संख्या–एल.डब्लू./एन.पी. 432/2006

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रमुख प्रकाशन

उत्तर प्रदेश मासिक	:	समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार की मासिक पत्रिका समूल्य उपलब्ध एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
नया दौर (उर्दू)	:	सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विषय की एक उर्दू मासिक पत्रिका, एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।
वार्षिकी (हिन्दी/अंग्रेजी)	:	उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के विस्तृत आंकड़ों एवं सूचनाओं का वार्षिक विवरण मूल्य रु. 325/– मात्र।

महत्वपूर्ण प्रकाशनों के लिए सम्पर्क करें

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र.
दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
उत्तर प्रदेश के समस्त जिला सूचना कार्यालय

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. स्वत्वाधिकारी के लिए विशाल सिंह, निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ द्वारा प्रकाशित तथा प्रकाश पैकेजर्स, लखनऊ में मुद्रित प्रभारी संपादक – दिनेश कुमार गुप्ता